# भ्रान्तिभञ्जकभास्कर

रामं स्वादिगुरु नत्वा परंब्रह्मसनातनम् ।
द्विभुजं जानकीनाथं सच्चिदानन्दविग्रहम् ॥
परात्परतरं तत्वं सत्यानन्दं चिदात्मकम् ।
ज्ञेयं ध्येयं गतिं गम्यं प्रपन्नानां परां गतिम् ॥
स्वप्राप्यं प्रापकंचैव योगक्षेमकरं तथा ॥
विहरंतं सीतयासार्द्धं विभूतिद्वयस्वामिनम् ॥
सर्वकारणकर्तारं निदानं प्रकृतेः परम् ।
अक्षरं परमंज्योतिः स्वरूपं पुरुषोत्तमम् ॥

स्वस्तिश्रीमन्तं करुणावन्तं श्रीहनुमन्तं नौमि कले ।
नित्यं विहरन्तं हरिजनवन्तं क्षमावहन्तं कीशबले ॥
सीतापतिपतिकं पररसरसिकं श्रितजनमतिकं दीनपतिम् ।
रघुनायकहृदयं हृद्रिपुविजयं शरणदमभयं सर्वनतिम् ॥

वन्दे श्रीसहितं गुरुमतिमहितं श्रुतिरसदयितं परममहम् ।
सीतारघुवीरं सुखमतिधीरं सुखदगभीरं विदितमहम् ॥
विधिहरिहरवन्द्यं श्रितजननन्द्यं प्रीतिमदाद्यं श्रुतिगम्यम् ।
साकेतपुरेशं द्विभुजपरेशं सर्वसुरेशं द्युतिरम्यम् ॥

सीतानाथ समारम्भां रामानन्दार्य मध्यमाम् ।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे श्री गुरु परम्पराम् ॥

आज हम एक अत्यन्त महत्व पूर्ण विषय पर अपना वक्तव्य देने के लिए प्रस्तुत हुए हैं।

संसार में दो प्रकार के लोग होते हैं एक वो जो सदा ही महापुरुषों का सत्कार करते हुए अपने जीवन का निर्वाह करते हैं और दूसरे वो जो सदा ही अन्यों से द्वेष करते हुए अपने जीवन को खपा देते हैं।

इन्हीं कुछ लोगों की श्रेणी में से एक व्यक्ति हैं जिन्होंने कुछ रामानुजीय दुराग्रही आचार्यों के कहने पर रामानन्द सम्प्रदाय के परमाचार्य स्वामी रामानन्द भगवान की कृति श्री वैष्णवमताब्जभास्कर के स्वरूप को बिगाड़ कर उसे चौखंभा प्रकाशन नई दिल्ली से उसे छपवाया। कहने को तो वे महापुरुष संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं लेकिन रामानन्द सम्प्रदाय के रहस्यों से वे कितने अनभिज्ञ रहे हैं इसका दिग्दर्शन आपको कुछ क्षणों में पता चलेगा जब हम आपको उनके अत्यन्त निरर्थक और हास्यास्पद तर्कों को आपके सामने रखेंगे।

उनके तर्कों(नही नहीं कुतर्कों) को हम आपके सामने रखते हैं -
पहला तर्क :-
वैष्णवजनों की अशेष जिज्ञासा के शमन में समर्थ 'श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर' ग्रन्थ है' जो यतीन्द्र श्रीरामानुजाचार्यजी के विशिष्टाद्वैतसिद्धान्त को प्रस्तुत करता है।

उत्तर - भगवन ! विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त रामानुजाचार्य जी का कब से हो गया ? वे उसके प्रवर्धक हुए हैं यह अवश्य सत्य है लेकिन विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त यतीन्द्र रामानुज स्वामी का है यह तो नितान्त भ्रामक कथन है। विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त की सर्वप्रथम चर्चा "वाल्मीकि संहिता" में आती है यथा प्रमाण :-

विशिष्टाद्वैतसिद्धान्ते तत्वत्रयमुदीरितम्।
तत् श्रोतुमभिवाञ्छामः कृपया ब्रूहि नः प्रभो॥

(वाल्मीकि संहिता अध्याय 2 श्लोक 43)

ऋषियों ने महर्षि वाल्मीकि कहा - हे प्रभो ! विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त में तीन तत्त्व कहे गये हैं। हम उन्हें श्रवण करना चाहते हैं। आप कृपाकर कहें।

इससे विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त की स्थिति रामानुजाचार्य जी के काल से पूर्व भी सिद्ध होती है और महर्षि वाल्मीकि ने सर्वप्रथम इसका उपदेश महर्षियों को किया है। यदि महर्षि वाल्मीकि इस विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त के प्रवर्तक आचार्य न होते तब किस प्रकार स्वामी रामानुज रामायण के रहस्यों को अपने गुरु से 17 बार श्रवण किए होते। आपके अनेकों आचार्यो ने महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण से ही अपने यहां विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त की पुष्टि की है।

वाल्मीकि रामायण में स्पष्ट रूप से विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त की पुष्टि होती है यथा प्रमाण - विशिष्टाद्वैत शब्द की व्याख्या क्या है -

विशिष्टञ्च विशिष्टञ्च विशिष्टे तयोर्विशिष्टयोरद्वैतम् विशिष्टाद्वैतम्।

अर्थात चिद चिद विशिष्ट स्थूल ब्रह्म और चिद चिद विशिष्ट सूक्ष्म ब्रह्म का जहां विशिष्ट अद्वैत होता है उसी को विशिष्टाद्वैत कहते हैं।

विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त में तीन तत्व होते हैं।

प्रथम तत्त्व है परमात्मा।
परमात्मा सबके शेषी हैं, सच्चिदानन्द स्वरूप हैं, सकल जगत का आधार हैं, सबके परम आश्रय हैं, सभी दिव्यानंत कल्याणगुणगणों से परिपूर्ण हैं।

वाल्मीकि रामायण में इसी परमात्मा तत्व की निष्पत्ति की गई है यथा प्रमाण - वाल्मीकीय रामायण युद्धकाण्ड (रावण का वध करने के पश्चात ब्रह्मा जी स्तुति करते हुए राम जी से कहते हैं -)

यत् परं श्रूयते ज्योतिर्यत् परं श्रूयते तमः । यत् परं परतश्चैव परमात्मेति कथ्यसे ॥
परमाख्यं परं यच्च त्वमेव परिगीयसे । स्थित्युत्पत्ति विनाशानां त्वामाहुः परमां गतिं ॥

वाल्मीकि रामायण के इस श्लोक में परमात्मा की अत्यन्त स्पष्ट व्याख्या करते हुए ब्रह्मा जी श्री राम से कहते हैं -
हे श्री राम ! वह आप ही हैं जिन्हें परम ज्योति, तमस से परे, पर से भी परे परमात्मा कहा जाता है । आप को पर से भी पर ऐसा गाया जाता है(अर्थात आप ही परात्पर परमात्मा हैं) । आप ही उत्पत्ति(ब्रह्मा), स्थिति(विष्णु) और विनाश(शिव) जी के परम कारण हैं और हे प्रभु ! आप ही जीवों की परम गति हैं ।

दूसरा तत्व है प्रकृति ।
यह प्रकृति तत्त्व अचेतन है । यही प्रकृति सारे विश्व का निर्माण करती है । इस प्रकृति तत्त्व की मूल अधिष्ठात्री भगवान की माया शक्ति हैं ।
यथा प्रमाण वाल्मिकीय रामायण
जगत्सर्वं शरीरं ते स्थैर्यं ते वसुधातलम् । (वाल्मीकि रामायण युद्धकाण्ड)
हे श्री राम ! समस्त जगत आपका ही शरीर है अर्थात शेष है । आपसे ही उद्भूत हुआ है । आप ही में निवास करता है और आप ही इसमें निवास करते हैं ।

तीसरा तत्व है जीव तत्त्व ।
यह तत्व सदा भगवान का शेष है । भगवान का सदा ही भोग्य है । स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर से भिन्न है । सच्चिदानंदमय है । और सदा भगवान को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है । शरणागति का अधिकारी है । यथा प्रमाण :-

सकृद् एव प्रपन्नाय तव अस्मि इति च याचते ।
अभयं सर्व भूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम ॥

(वाल्मीकि रामायण)
भगवान स्वयं जीव के शेषत्व का अभिधान करते हुए कहते हैं - जो जीव "मैं आपका हूं" ऐसा कहते हुए एक बार भी मेरी प्रपन्नता को ग्रहण करता है उसे मैं अभय पद(अर्थात अपना साकेत) प्रदान कर देता हूं।

इन सब प्रमाणों के आधार पर विशिष्टाद्वैत तो मूल रूप से वाल्मीकि रामायण का सिद्धान्त है जिसे रामानुज स्वामी ने देखकर इसका महत्व समझ कर उसे स्वीकार किया है। तब प्रोफेसर जी ! आपका कहना यह सिद्धान्त यतीन्द्र रामानुज स्वामी जी का ही है यह तो बहुत निरर्थक वचन है।

उन्ही प्रोफेसर जी के एक और मित्र हैं जिनका नाम कृष्णानंद उपाध्याय है वे लिखते हैं -

सिद्धान्त एक होने पर भी नाम मात्र के भेद से सिद्धान्त का भेद यदि स्वीकार किया जायेगा तो मूल ग्रन्थ में परिवर्तन, आचार्यों के नाम से नये ग्रन्थों का निर्माण और व्याख्यानों में खींचतान की जायेगी। श्रीरामानुजीयों के जबड़ों से श्रीरामानन्दीय सम्प्रदाय को बाहर निकालने में भगीरथ प्रयास करने वाले श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी ने कई जगह मूल ग्रन्थ को बदला है और अपनी सुविधा के अनुरूप व्याख्यान भी किया है। हिन्दीव्याख्या में मूल के परिवर्तन को व्याख्याकार श्रीत्रिपाठी जी ने दिखला दिया है। कालक्षेपप्रकरण में 'श्रीशमभ्यर्च्य रामम्' की जगह 'राममभ्यर्च्य सम्यक्' पाठ कर दिया गया है। इस परिवर्तन का प्रयोजन जनता में यह सन्देश प्रेषित करना है कि श्रीरामचन्द्रजी सीताजी के पति हैं, श्री अर्थात् लक्ष्मी के पति नही हैं। इतना व्यायाम उनका व्यर्थ ही सिद्ध होता है क्योंकि अन्यत्र निवासप्रकरण में विष्णु, रमासख, नारायण आदि को उन्होंने परमात्मा के रूप में स्वीकार कर लिया है। अर्चावतार में भी उन्होंने श्रीराम को लक्ष्मीपति माना है।

उच्चाटन - प्रोफेसर जी ! लगता है आप लोग ठीक से ग्रंथों का अनुसंधान नही करते। सबसे पहली बात तो यह है कि एक सत्सम्प्रदाय के महान आचार्य की कृति में बदलाव आप लोग करते हैं और कृति को परिवर्तित करने का आरोप रामानंदीय श्री

वैष्णवाचार्यों पर मढ़ते हैं यह आप लोगों की कुटिलता की सीमा का दर्शन कराता है ।

आपने कहा नाम मात्र का भेद - प्रोफेसर जी ! जरा कान में तेल डाल कर सुनिए ! श्री राम मंत्र - श्री नारायण मंत्र से हर प्रकार से भिन्न है ।

राम मंत्र में प्रणव का अनुसंधान नही होता है बीज मंत्र का अनुसंधान होता है । नारायण अष्टाक्षर मंत्र में प्रणव का अनुसंधान होता है ।

यदि इस भेद को आप मंत्रो के अर्थ में अभेद कहकर खण्डित करने का कुचोद्य करते हैं तो इसकी निवृत्ति तो स्वयं रामानुजीय आचार्यों ने माना है ।

विशिष्टाद्वैत और अद्वैत में मात्र 2 से 3 प्रतिशत का ही भेद है आप विद्वान हैं इसलिए ज्यादा इसका विस्तार नही कर रहा हूं लेकिन आप समझदार हैं समझ जाएंगे ।

दो या तीन प्रतिशत के भेद होने पर भी (या आपकी भाषा में कहूं तो नाम मात्र के भेद होने पर भी) आप का सम्प्रदाय शांकर सम्प्रदाय से भिन्न हो सकता है लेकिन रामानंदीय सम्प्रदाय की स्वतंत्र गुरु परम्परा का विधान जो अनेकानेक शास्त्रों में किया गया है वो आर्ष सत्सम्प्रदाय आपका अंग हो गया ? वाह रे कुटिलता की सीमा ! रामानुजीयों के जबड़ों से रामानन्दीय श्री वैष्णव सम्प्रदाय को बाहर निकालने का भगीरथ प्रयास हमने नही किया क्योंकि हम तो वैष्णव हैं सदैव भगवान की कृपा का ही अवलंबन लिए बैठे हैं यह सब हमारी परम आराध्या परम आचार्या श्री जानकी जी की कृपा से संभव हो सका है । रामेश्वरानंदाचार्य जी महाराज द्वारा पाठ बदले जाने की बात जो आप कर रहे हैं उन्ही रामेश्वरानंद जी के द्वारा दिए गए पाठ 1775 ईस्वी के लगभग की पांडुलिपि में प्राप्त होते हैं और वे ही पाठ स्वामी जी ने रखे हैं । तब तो रामानन्द सम्प्रदाय के अनभिज्ञ साधकों को भटकाने का भगीरथ प्रयास आप ही कर रहे हैं हम नहीं ।

आपको बता दूं कि भगवान श्री रामचन्द्र केवल केवल और केवल श्री सीता जी के ही पति हैं और आपकी ये जो बकवास है कि लक्ष्मी जी के पति नहीं है तो ऐसी करोड़ों लक्ष्मी श्री किशोरी जी के अंश से उद्भूत हैं अस्तु उनकी अंगजाएं हैं इस दृष्टि से श्री राम जी उनके पति या स्वामी कहलाते हैं मुख्य दृष्टया नही यथा प्रमाण -

जासु अंश उपजहिं गुण खानी। अगणित उमा रमा ब्रह्माणी।

भगवती श्री सीता जी के अंश से करोड़ों उमा रमा ब्राह्मणियों का उद्भव होता है।

विष्णु रमासख और नारायण आदि सभी श्री राम के ही विशेषण हैं। यदि विशेषण और विशेष्य का संबंध क्या होता है ये आप नहीं समझते तो आपके विशिष्टाद्वैत विद्या पर ही प्रश्न चिन्ह खड़ा हो जाएगा आचार्य जी!

आगे कृष्णानंद जी कहते हैं -

सारे आर्ष ग्रन्थ श्रीरामचन्द्रजी को विष्णु का अवतार मानते हैं। जैसा कि वाल्मीकिरामायण में ब्रह्मा की यह स्तुति श्रीरामचन्द्रजी को अवतार सिद्ध करती है -

भवान् नारायणो देवः श्रीमांश्चक्रायुधः प्रभुः।
एकशृङ्गो वराहस्त्वं भूतभव्यसपत्नजित्॥

अक्षरं ब्रह्म सत्यञ्च मध्ये चान्ते च राघव।
लोकानां त्वं परो धर्मो विष्वक्सेनश्चतुर्भुजः॥

शार्ङ्गधन्वा हृषीकेशः पुरुषः पुरुषोत्तमः।
अजितः खड्गधृग् विष्णुः कृष्णश्चैव बृहद्बलः॥

यही समस्या है आपकी प्रोफेसर जी!

आपको इन श्लोकों में भगवान राम विष्णु के अवतार दिखाई पड़े। लेकिन यहां तो श्री राम के द्वारा लिए गए विभिन्न स्वरूपों का वर्णन है न कि वे किसके अवतार हैं।

"भवान् नारायणो देवः" से यहां श्री राम जी और नारायण में विशेष्य विशेषण का बोध होता है। यदि यहां "भवान्" पद देखकर आपको भगवान राम और विष्णु में अभेद सिद्ध करने की लालसा जग चुकी है तब पद्मपुराण में आए निम्न श्लोकों में भी आपको यही अभेद वर्णन करना होगा :-

सीता लक्ष्मीर्भवान् विष्णुः सीता गौरी भवान् शिवः ॥
सीता स्वयं हि सावित्री स्वयं ब्रह्मा चतुर्मुखः।
सीता शची भवान् इन्द्रः सीता भैमी नलो भवान् ॥
सीता संहारिणी देवी यमरूपधरो भवान्।
सीता तु मानसी देवी निरतिस्त्वं रघुत्तम ॥
सीता तु भार्गवी देवी वरुणो स्मरणं पतिः।
सीता सदागतिर्देवी जगत्प्राणधरो भवान् ॥
सीता तु सर्वसम्पत्तः कुबेरस्त्वं जगत्पते।
सीता च देवी रुद्राणी भवान् रुद्रो महाबलः ॥
सीता तु रोहिणी देवी चन्द्रस्त्वं लोकसौख्यदः।
सीता संज्ञा भवान् सूर्यः सीता रात्रिर्भवान् दिनम् ॥
सीता देवी महाकाली महाकालो भवान् खलु।

यहां यदि "भवान्" पद का अर्थ आपके अनुसार लगाएं प्रोफेसर जी ! तब तो सीता जी का महाकाली सावित्री गौरी शची आदि देवियों और श्री राम जी का शिव ब्रह्मा नल कुबेर महाकाल आदि देवताओं से अभेद सिद्ध होगा और यह तो वस्तुतः आपके सम्प्रदाय का जो सिद्धान्त है कि भगवान नारायण (ब्रह्मा इंद्र शिव) आदि देवताओं के स्वामी हैं और ये सभी उनके अंश हैं यही सिद्धान्त खण्डित हो जाएगा।

भगवन् ! यहां के श्लोकों का सम्प्रदाय की रीति से अनुभव करने पर "भवान्" यह पद केवल श्री राम के विशेषणों/स्वरूपों/शेषभूत अवतारों को प्रकट करने हेतु प्रयोग किया गया है।

यह समझ आपको इस प्रकार नहीं होगी क्योंकि इसका भी एक कारण है। रामायण का ज्ञान श्री महर्षि वाल्मीकि को नारद मुनि से प्राप्त हुआ था। और महर्षि वाल्मीकि जी जो राम मंत्रानुसंधान में रत थे उन्हें यह ज्ञान उनके गुरुदेव राम मंत्र के आचार्य नारद मुनि से प्राप्त हुआ। इससे यह सिद्ध होता है कि इस परम पावन ग्रन्थ के कर्ता रामानन्दीय श्री वैष्णव सम्प्रदाय के आचार्य हैं। तब जिस सम्प्रदाय के आचार्य का यह ग्रन्थ है उस सम्प्रदाय के सिद्धान्त से इतर आपके द्वारा इसकी अत्यन्त हास्यास्पद व्याख्या करना यह समीचीन पक्ष नहीं है। वाल्मीकि जी राम मंत्र के आचार्य थे इसके लिए मैं आपके ही सम्प्रदाय के आचार्य स्वामी गोविन्दराज जी द्वारा रचित भूषण टीका से ही प्रमाण प्रस्तुत कर रहा हूं -

लवणासुरं ध्वंसयित्वा भागवतशेषत्वं। तानिमान् धर्मान् तानीमानि चापदानानि तत्कालमात्रपर्यवसितानि भविष्यन्तीतिमन्वानः सर्वलोकहितपरः पितामहो भगवान् ब्रह्मा रामचरित्रपवित्रितं शतकोटिप्रविस्तरं प्रबन्धंनिर्माय तं नारदादीनध्याप्य भूलोकेऽपिसंतत-रामन्त्रानुसन्धानसन्धुक्षितहृदयवाल्मीकिमुखेन संग्रहेणप्रवर्तयितुं नारदंप्रेषयामास। तदुक्तंमात्स्ये "वाल्मीकिना च यत्प्रोक्तं रामोपाख्यानमुत्तमम्। ब्रह्मणाचोदितं तच्च शतकोटिप्रविस्तरम्। आहृत्य नारदेनैव वाल्मीकाय निवेदितं" इति। वाल्मीकिरपिनिखि-

इसलिए राम मंत्र का सतत जप करने वाले महर्षि वाल्मीकि जी ने श्री राम जो सकल वेद वेद्य हैं जो परात्परतम तत्त्व हैं उन्हें विभवावतार कहना ये तो महर्षि वाल्मीकि जी के साधना पर ही आप प्रश्न चिन्ह खड़े कर रहे हैं। श्री राम ही चतुर्भुज नारायण अवतार में प्रकट होते हैं यथा प्रमाण -

ततस्त्वमसि दुर्धर्षात्तस्माद् भावात् सनातनात्।
रक्षार्थं सर्वभूतानां विष्णुत्वं उपजग्मिवान्॥
(रामायण उत्तर काण्ड अध्याय १०४ श्लोक ९)
ब्रह्मा जी ने भगवान श्री राम से कहा - आपने अपने दुराधर्ष सनातन भाव(वह स्वरूप जो मन और वाणी से अगोचर है वह नित्य साकेत विहारी द्विभुज स्वरूप) का विस्तार करके सभी जीवों के रक्षार्थ विष्णु रूप में प्रकट हुए।

यह श्लोक वाल्मीकि रामायण का ही है इसी श्लोक की कुछ टीकाएं आपके सामने रखते हैं -

तिलक टीका - ततो हेतो रक्षणस्य सर्वशक्तौ त्वय्येव निवेशितत्वहेतोः। दुर्धर्षात्तस्माद्भावात् 'ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्। तेन कोऽर्हति स्पर्धितुम्' इति दुर्धर्षत्वस्वभावात्। सनातनात्सकलसंसारमूलकारणत्वेन कालापरिच्छेदात्। त्रिगुणमहत्तत्वाख्यहैरण्यगर्भभावात्सत्त्वप्राधान्येन विष्णुत्वं प्राप्तवान्॥

यहां टीकाकार ने दुर्धर्ष पद की व्याख्या वेदों में वर्णित "ब्रह्म" तत्त्व से की है जिसकी स्पर्धा कोई नही कर सकता, जो पर से भी पर है जिसके परे कुछ नही है। सनातन पद का अर्थ है कि "जो सकल संसार के मूल कारण हैं"। वही साकेतविहारी द्विभुज धनुर्धारी श्री राम ही सत्त्व प्राधान्य से विष्णु रूप से प्रकट हुए हैं।

शिरोमणि टीका - दुर्धर्षात् सनातनात् सनस्य ब्रह्मणोपि आतनात् विस्तारकत्वाद्धेतोः भूतानां रक्षां विधास्यन् त्वमेव विष्णुत्वं पालनशक्तिमुपजग्मिवान्।

शिरोमणि टीकाकार कहते हैं कि सन अर्थात ब्रह्म श्री राम जी ने ही अपने विस्तार करने हेतु पालन शक्ति हेतु विष्णु रूप में सकल जीवों की रक्षा हेतु अवतार लिया।

गोविन्दराजीय टीका - ततः मत्कृतभारसमर्पणेन दुर्धर्षात् दुर्ज्ञेयात्, सनातनान्नित्यात्, भावात् <u>परवासुदेवस्वभावात्सर्वभूतानां रक्षार्थं विष्णुत्वमुपजग्मिवान्</u> प्राप्तवान्।

गोविन्दराज जी कहते हैं कि दुर्धर्ष पद का अर्थ यहां दुर्ज्ञेय(जिन्हें पूर्ण रूप से जानना दुष्कर है) ऐसे परवासुदेव भाव को त्याग कर अपने जीवों के रक्षा हेतु विष्णु रूप धारण किया।

प्रोफेसर साहब ! आपके यहां परवासुदेव ही परम तत्व स्वीकार किए गए हैं (श्री वेदान्त देशिक जी ने भी रहस्यत्रय सार में परवासुदेव को परम तत्व स्वीकार किया है) वही परम तत्त्व श्री राम हैं जो साकेत में द्विभुज रूप में निवास करते हैं और भक्तों के इच्छार्थ नारायण रूप में प्रकट होते हैं।

हमने किसी अन्य ग्रन्थ से प्रमाण नही दिया क्योंकि आपने प्रश्न ही वाल्मीकि रामायण से किया था। अस्तु आपका यह कहना कि ये वचन राम और विष्णु का पूर्ण अभेद सिद्ध करते हैं ये समीचीन नही है विशिष्टाद्वैत में शेषी शेष संबंधतया ही अभेद और भेद दोनों स्वीकार्य हैं इसी प्रकार श्री राम और नारायण में विशेष्य-विशेषण सम्बन्ध अथवा शेषी-शेष सम्बन्ध का ही अभिधान करना यही हमारे पूर्वाचार्य महर्षि वाल्मीकि का सिद्धान्त है।

आगे प्रोफेसर जी कहते हैं -

जो दोनों सम्प्रदायों के भेद को स्थापित करने के लिए भगीरथ प्रयास किये हैं या कर रहे हैं उनके अनुसार सर्वावतारी श्रीरामचन्द्र हैं और उनकी पत्नी श्रीसीताजी है जिन्हें देशविशेष के सम्बन्ध से मैथिली और पिता के सम्बन्ध से जानकी कहते हैं। लक्ष्मीनारायण से सीताराम का भेद वे मानते ही है, नहीं तो उनका वह भगीरथ प्रयास ही निरर्थक हो जायेगा। इस प्रकार भगवती श्री सीताजी से सम्बन्धित होने के कारण

श्रीरामानन्दीय सम्प्रदाय को सीतासम्प्रदाय या मैथिलीसम्प्रदाय होना चाहिये। यदि स्वयम् को आप अलग कर रहे हैं तो पूर्णरूप से अलग हो जाइये। यह कौन सा शिष्टकार्य है कि किसी के 'सम्प्रदाय' का ही अपहरण करके उसे भगोड़ा सिद्ध करें? रामानुजियों का भी तो कोई सम्प्रदाय होना चाहिये। उनको भी तो जीने-खाने का कोई आलम्बन होना चाहिये।

उच्चाटन :- प्रोफेसर साहब ! आपने कहा जो दोनों सम्प्रदाय को भिन्न मानते हैं उनके अनुसार ही श्री रामचन्द्र सर्वावतारी हैं जो कि अत्यन्त अपमानजनक वक्तव्य है। श्री रामचन्द्र सदा नित्य रूप से सकल अवतारों के कारण हैं। सृष्टि के पूर्व में भी वही श्री राम जी साकेत में विराज रहे थे। उन्होंने ही अनेकों अवतारों द्वारा सब पर अनुग्रह किया है। लक्ष्मी नारायण से सीताराम का अभेद विशिष्टाद्वैत सिद्धांत के दृष्टि से ही मान्य है। अंशी अंश का संबंध परम्परा की रीति से मानना यह वैदिक सिद्धान्त है। आप में इस रामानन्दीय सम्प्रदाय के लिए कितना द्वेष भरा है वह आपके इस वाक्य "रामानंदीय सम्प्रदाय को सीता सम्प्रदाय ऐसा कहना चाहिए" से प्रकट हो रहा है।

समस्त रामानन्दीय परम्परा श्री सीता जी को ही मूल श्री रूप में मानती है जो अथर्ववेद के पुरुष सूक्त के "श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्या" इस मंत्र से सर्वविदित है। भगवती श्री जानकी श्रियों की भी परम श्री हैं यथा वाल्मीकि रामायणे -

"वसुधाया हि वसुधां श्रियः श्री भर्तृवत्सलाम्"

इसलिए श्री सीता जी को श्री कहना यह परम वैदिक सिद्धान्त है क्योंकि परम श्री सीता जी ही हैं। ऐसा ही है जैसे नदियों की स्थिति तो स्वीकार करना लेकिन सागर की नही। क्योंकि सभी नदियां सागर में ही जाकर मिलती हैं।

उसी प्रकार सर्वलक्ष्मीमयी श्री सीता जी मूल श्री देवी हैं।

और प्रोफेसर जी ! हम अपने को अलग कर नही रहे हैं हम आपसे अलग हैं और सर्वदा से हैं ! हां यह बात अवश्य है कि पूर्व काल में संशय और विभ्रम के कारण साधु

जनों को रामानुजीय कुटिल आचार्यों ने भ्रमित किया लेकिन आप सब का कुकृत्य आज से 103 वर्ष पूर्व उज्जैन कुम्भ के शास्त्रार्थ में ही उजागर हो गया और वहां रामानंदियों की विजय हुई।

आपके सम्प्रदाय का अपहरण हम नही कर रहे हैं उल्टे आप लोग राम मंत्र में अदीक्षित होने से राम मंत्र परम्परा के आचार्य की कृति को विकृत करने की अनाधिकार चेष्टा कर रहे हैं तो अपहरण आप कर रहे हैं या हम ये विज्ञ जन समझ सकते हैं। रामानुजियों का सम्प्रदाय तो बहुत पहले से ही रहा है और आगे भी रहेगा उस पर कभी हमने प्रश्न चिन्ह खड़े ही नही किए किन्तु इसके विपरीत आप लोगों ने रामानन्द सम्प्रदाय के ही अस्तित्व पर प्रश्न खड़े किए हैं। आप जीने खाने के अवलंबन की बात करते है प्रोफेसर जी ! अरे आप तो खाने पीने की बात छोड़िए उससे तो कही ऊपर जाकर रामानुजीय कुटिल आचार्यों का अवलंबन पाकर आप तो सीधे रामानन्द सम्प्रदाय के ग्रंथों के ही स्वरूप को ही विकृत कर रहे हैं।

प्रोफेसर साहब लिखते हैं -

श्रीरामानन्दीय सम्प्रदाय में अनेक साधुवृन्द स्वयम् को श्रीरामानुजसम्प्रदाय से संपृक्त मानते हैं। श्रीरामानुजसम्प्रदाय में ही श्रीरामानन्दाचार्यजी ने उत्तरभारत में श्रीरामभक्तिमयी भागीरथी की धारा को प्रवाहित किया, ऐसा उनका मानना है। इस ग्रन्थ के पं. श्रीरामटहलदासजी के द्वारा संशोधित और सम्वत् १९८४ में प्रकाशित संस्करण के परिशिष्ट में अधिकवैष्णवानुमोदित गुरुपरम्परा भी दिखायी गयी है जिसमें सर्वमान्य भक्तमाल की अनुकूलता भी है। इस मत की गुरुपरम्परा इस प्रकार यथार्थ जैसी लग रही है। भूमिका में ही दो दोहे इस प्रकार है -

लक्ष्मीनाथ आरम्भ करि मध्य यामुनाचार्य।
मम श्रीगुरुपर्यन्त लों बन्दों सब आचार्य ॥१॥
करुणावरुणालय सदा पालय दालय काम।
टहलमहल मन्दिर बसहु लखन सहित श्रीराम ॥२॥

इससे श्रीरामानुजीय गुरुपरम्परा का ही निश्चय हो रहा है। जैसा कि उस सम्प्रदाय में सुना जाता है-

'लक्ष्मीनाथसमारम्भां नाथयामुनमध्यमाम् । अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥'

यह श्लोक श्रीअवध शृङ्गारभवन के पं. श्रीरामनारायणदासजी के 'श्रीभगवत्पूजनक्रम' नामक ग्रन्थ के आदि में लिखा प्राप्त होता है। परिशिष्टकार का यह कथन ध्यातव्य है -

यह श्लोक श्रीरामानन्दीय समाज की सभी परम्पराओं में मिलता है। इसके उद्धृत होने से ही पूर्वाचार्यो का सम्बन्ध झलक जाता है।

उच्चाटन :- अरे प्रोफेसर साहब ! आपने उद्धरण भी दिया तो किसका दिया ! एक सम्प्रदाय संकर व्यक्ति का ! जिन्हें खुद ही कोई रामानन्दीय श्री वैष्णव प्रमाण नही मानता । और अधिक वैष्णवानुमोदित से यदि आपका अर्थ इसकी प्रामाणिकता को प्रकट करना है तो प्रोफेसर जी ! हम भी यदि आपके साम्प्रदायिक ग्रंथ के कुछ श्लोक बदलकर आपके ही सम्प्रदाय के महानुभावों को दिग्भ्रमित करके उसे छाप दें तो क्या आप उसे प्रमाण रूप में स्वीकार करेंगे ? यदि करेंगे तो आप सम्प्रदाय के ही सिद्धान्त द्रोही होंगे और यदि नही करेंगे तो यही हमसे अपेक्षा नही कर सकते आप ! इसलिए आपका यह निरर्थक उद्धरण यही पर ध्वस्त हो जाता है ।

लक्ष्मीनाथ से परम्परा नारायण अष्टाक्षर मंत्र की है राम मंत्र की नही यह तो आपके आचार्य ने ही चिल्ला चिल्ला कर कहा है

"नह्येते मन्त्रा अस्मत्कुलपरम्पराप्राप्तमन्त्रत्रयव्यतिरिक्ता लक्ष्मीनाथमारभ्यास्मादाचार्य पर्यन्तं केनचिदाचार्येण कस्य चिच्छिष्यस्योपदिष्टा इति ॥"
(स्वामी रंगाचार्य कृत दुर्जनकरिपंचानन)

अर्थात हमारे कुलपरम्परा प्राप्त श्रीमन्नारायण रहस्यत्रय को छोड़कर श्रीलक्ष्मीनाथ से लेकर हमारे आचार्य पर्यन्त किसी भी आचार्य ने अपने किसी भी शिष्य को इन श्रीरामकृष्णादि मन्त्रों का उपदेश नहीं किया है।

तो जब आपके ही आचार्य अपनी परम्परा में कदापि राम मंत्र नहीं है ऐसा मान रहे हैं तो आप हमारे ग्रन्थ को विकृत करके उसमें यह चिल्ल पो क्यों मचा रहे हैं ?

वस्तुतः प्रोफेसर साहब ने यहां कोई परिश्रम नहीं किया बल्कि रामानंदीय सम्प्रदाय में पूर्व काल में हुए सम्प्रदाय संकर रामटहलदास जी के ही उक्त १२१ प्रश्नों को यथावत छाप दिया है। ऐसे में तो रामानन्द सम्प्रदाय और रामानुज सम्प्रदाय में अभेद दिखाने का भगीरथ प्रयास आप ही कर रहे हैं यही स्पष्टतया निर्गत हो रहा है प्रोफेसर साहब ! खैर सभी को बता दूं कि उन सभी १२१ आक्षेपों के खण्डन आज से ३४ वर्ष पूर्व ही षड दर्शन केसरी परम पूज्य पण्डित प्रवर वैदेही कान्त शरण जी द्वारा श्रीमठस्मारिका समीक्षा में किया जा चुका है। फिर भी उन सब 121 प्रश्नों का फिर से खण्डन श्रृंखला पूर्वक हम करेंगे।

पहला प्रश्न -

श्रीरामानन्दाचार्य जी के परम गुरु श्रीहर्याचार्यस्वामी जी ने स्वनिर्मित 'श्रीरामस्तवराजभाष्य' के मङ्गलाचरण में एक पद्य लिखा है -

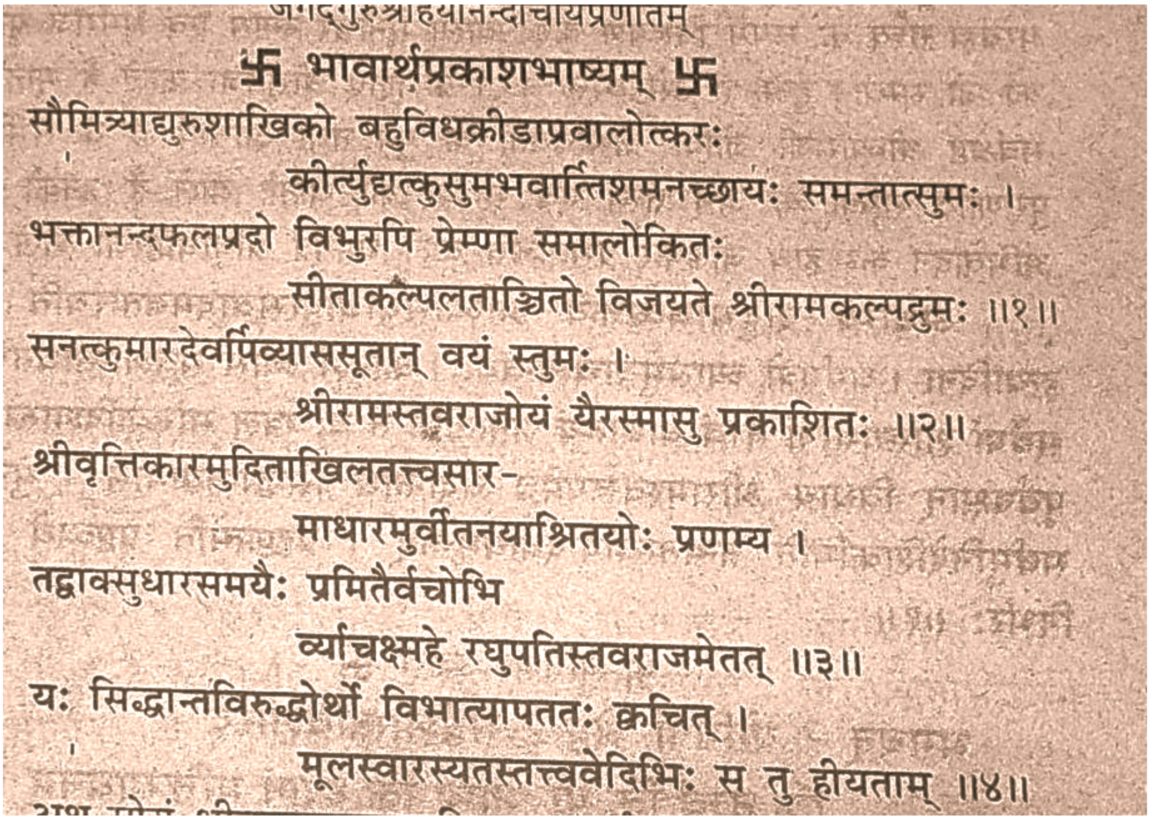
श्रीभाष्यकारमुदिताखिलतत्त्वसारमाधारमब्धितनयाच्युतयोः प्रणम्य।
तद्वाक्सुधारसमयैः प्रमितै र्वचोभिः र्व्याचक्ष्महे रघुपतिस्तवराजमेतत् ॥

एवमेव उन्होंने अन्त में लिखा है-

'श्रीरामानुजसिद्धान्तवेदी हर्याचार्यो भावगर्भं यदेतद् भाष्यम्।'

इन वचनों से दोनों सम्प्रदायों की एकता सिद्ध होती है।

उच्चाटन :- रामटहल दास कुछ तो विद्वान रहे ही होंगे क्योंकि उन्होंने यह श्लोक में मिलावट कर उसे हर्याचार्य जी का बता डाला । श्री हर्याचार्य जी ने वस्तुतः मंगलाचरण में जो लिखा है वो हम दिखाते हैं -


जगद्गुरुश्रीहर्यानन्दाचार्यप्रणीतम्

卐 भावार्थप्रकाशभाष्यम् 卐

सौमित्र्याद्युरुशाखिको बहुविधक्रीडाप्रवालोत्करः
कीर्त्युद्यत्कुसुमभवार्त्तिशमनच्छायः समन्तात्सुमः ।
भक्तानन्दफलप्रदो विभुरपि प्रेम्णा समालोकितः
सीताकल्पलताश्चितो विजयते श्रीरामकल्पद्रुमः ॥१॥
सनत्कुमारदेवर्पिव्याससूतान् वयं स्तुमः ।
श्रीरामस्तवराजोयं यैरस्मासु प्रकाशितः ॥२॥
श्रीवृत्तिकारमुदिताखिलतत्त्वसार-
माधारमुर्वीतनयाश्रितयोः प्रणम्य ।
तद्भावसुधारसमयैः प्रमितैर्वचोभि
र्व्याचक्ष्महे रघुपतिस्तवराजमेतत् ॥३॥
यः सिद्धान्तविरुद्धोर्थो विभात्यापततः क्वचित् ।
मूलस्वारस्यतस्तत्त्ववेदिभिः स तु हीयताम् ॥४॥

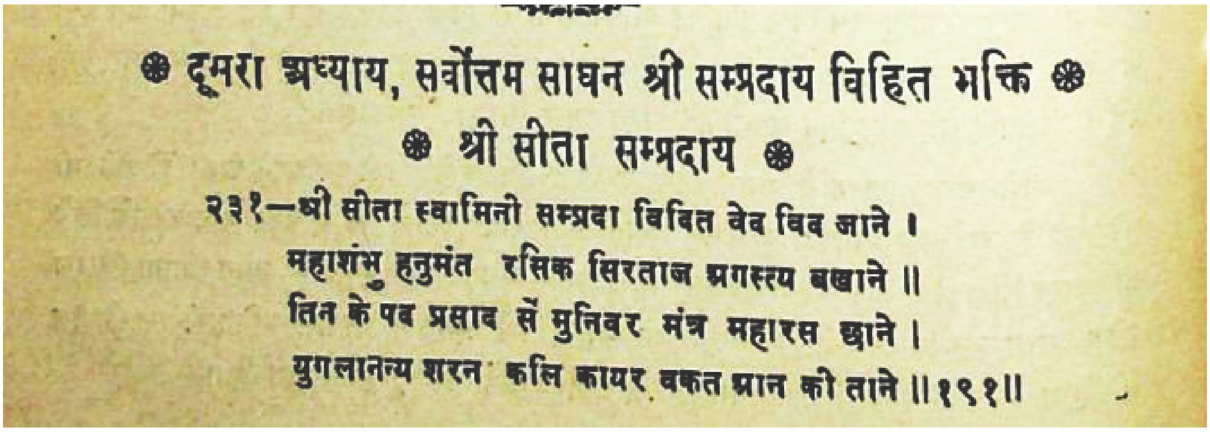
यहां स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है उन्होंने "श्रीवृत्तिकार" लिखा है और श्री बौधायन जी के ही सिद्धान्त को आधार मानकर उन्होंने राम जी के स्तवराज की व्याख्या लिखी है।

प्रश्न २ -

चिरानछपरा के श्रीजीवारामजी ने 'रसिकप्रकाशभक्तमाल' ग्रन्थ लिखा है जो नवल किशोर प्रेस, लखनऊ से छपा है। इस ग्रन्थ में भी दोनों सम्प्रदायों की एकता प्रमाणित होती है -

'वन्दौ पादपद्म श्रीहरियानन्दस्वामीजू के जिन उरधारी सीताराम की उपासना ।
'लक्ष्मीसम्प्रदाय' में प्रसिद्ध मन्त्र तारक जो, पारक है सोई करी शिष्यन को शासना ॥

यहां पर श्री जानकी रसिक शरण जी को भ्रम उत्पन्न हुआ क्योंकि उनके ही पूर्वाचार्य स्वामी युगलानन्य शरण जी महाराज ने अपनी परम्परा श्री सीता जी से मानी है यथा प्रमाण -


❁ दूसरा अध्याय, सर्वोत्तम साधन श्री सम्प्रदाय विहित भक्ति ❁
❁ श्री सीता सम्प्रदाय ❁
२३१—श्री सीता स्वामिनी सम्प्रदा विदित वेद विद जाने ।
महाशंभु हनुमंत रसिक सिरताज अगस्त्य बखाने ॥
तिन के पद प्रसाद सें मुनिवर मंत्र महारस छाने ।
युगलानन्य शरन कलि कायर बकत प्रान की ताने ॥१९१॥

इश्क कान्ति अध्याय 2

युगलानन्य शरण जी महाराज स्वरचित ग्रन्थ इश्क कान्ति के दूसरे अध्याय में श्री सीता जी से ही अपनी परम्परा का आरम्भ मानते हैं।

प्रश्न ३

आचार्यवर्य श्रीस्वामीरामानन्दजी के शिष्य श्रीअनन्तानन्दस्वामीजी ने अपने ग्रन्थ 'श्रीहरिभक्तसिन्धुबेला' (यह ग्रन्थ रैवासा स्थान में पाण्डुलिपि के रूप में सुरक्षित है) में लिखा है -

वन्दे श्रीराघवाचार्यं रामानुजकुलोद्भवम् । याम्यादुत्तरमागत्य राममन्त्रप्रचारकम् ॥

इस वचन से यह सिद्ध होता है कि श्रीरामानन्दाचार्य जी के गुरु श्रीराघवाचार्य जी श्रीरामानुजाचार्य जी के कुल में ही उत्पन्न हुए थे जो दक्षिण से उत्तर भारत में आकर श्रीराममन्त्र का प्रचार किये थे।

उच्चाटन :- जगद्गुरु अनन्तानन्दाचार्य जी ने सिद्धान्त दीपक में लिखा है सीतानाथ
समारम्भां श्रीबोधायन मध्यमाम् ।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम् ॥

तब जब वे श्री सीताराम जी से अपनी गुरु परम्परा का आरम्भ मान रहे हैं तब वे "रामानुज कुलोद्भवम्" यह कैसे लिख सकते हैं। यदि दक्षिण से आकर उन्होंने राम मंत्र का प्रचार किया तब आपके तर्क से उनसे पूर्व के सभी आचार्यों ने भी अवश्य ही राम मंत्र का ही प्रचार किया होगा यदि आप उन्हें रामानुज स्वामी जी की ही गुरु परम्परा का मान रहे हैं प्रोफेसर साहब ! तो यह तो बताइए कि रामानुज सम्प्रदाय के किस ग्रन्थ में राम मंत्र और उसके रहस्यत्रय का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है - यदि कहो कि पहले प्रचारक आचार्य श्री राघवानन्द थे तो वे गुरु द्रोही सिद्ध होते हैं क्योंकि नारायण मंत्र लेकर वे षडक्षर राम मंत्र का प्रचार कैसे कर दिए ?

वस्तुतः वे रामानुज सम्प्रदाय से तो थे ही नहीं वे श्री सीतारामीय श्री वैष्णव परम्परा जिसकी प्रथम आचार्या श्री जानकी जी हैं उसी परम्परा के आचार्य थे। और श्री राघवानन्द जी दक्षिण से थे ही नहीं।

श्री राघवानन्द जी ने अवधी भाषा में पंच तन्मात्रा नामक ग्रंथ की रचना भी की है इससे उनका दाक्षिणात्य होना संदेहास्पद है और रसिक प्रकाश भक्तमाल में भी उन्हें काशी में ही रहना बताया गया है।
रसिक प्रकाश भक्तमाल पृष्ठ ११ -

* श्री स्वामी राघवानन्दजी का जीवन चरित *

रसिक राघवानन्द बसे काशी अस्थाना।
गुरु रूप शिव लये दये रसिकाई ध्याना ॥
काल करालहि जीति शिष्य किय रामानन्दा।
प्रगटी भक्ति अनादि अवध गोपुर स्वच्छन्दा ॥
जो आचारज को रूप धरि जगत उधारण जतन किय।
महिमा महा प्रसाद की प्रगटि रसिक जन सुख दिय ॥१०॥

इसलिए उन्हें दक्षिण का कहना अत्यन्त ही मूर्खता पूर्ण कथन है। अब हम स्वामी राघवानन्द जी की अन्य कृतियों में उन्होंने क्या परम्परा बताई है वह दिखाते हैं -

**राघवेन्द्रमंगलमाला में -**

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

दुर्वादध्वान्तमार्तण्ड जगद्गुरु श्रीराघवानन्दाचार्य

सिद्धसम्राट् प्रणीता

## श्रीराघवेन्द्रमङ्गलमाला

राघवेन्द्रं नमस्कृत्य हर्यानन्दं गुरुं तथा ।

कुर्वे मङ्गलमालां श्रीराघवेन्द्रस्य तुष्टये ॥१॥

**सीतामंगलमाला में**

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

दुर्वादध्वान्तमार्तण्डसिद्धसम्राट्

जगद्गुरु श्रीराघवानन्दाचार्यप्रणीता

## श्रीसीतामङ्गलमाला

हर्यानन्दं गुरुं नत्वा रामं सीतां च मारुतिम् ।

श्रीसीतामङ्गलानां च सन्मालां विदधाम्यहम् ॥१॥

**राघवप्राप्तिबोध में**

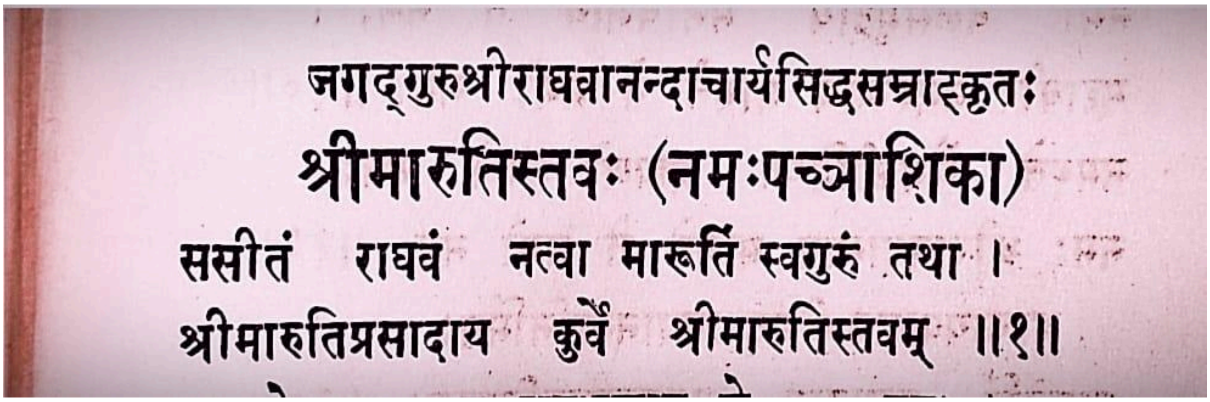
जगद्गुरुश्रीराघवानन्दाचार्यसिद्धसम्राट्प्रणीतः

## श्रीराघवप्राप्तिबोधः

राघवं च गुरुं नत्वा व्यासं बोधायनं तथा ।

राघवप्राप्तिबोधं हि कुर्वे राघवभक्तिदम् ॥१॥

मारुतिस्तव में



जगद्गुरुश्रीराघवानन्दाचार्यसिद्धसम्राट्कृतः

श्रीमारुतिस्तवः (नमःपञ्चाशिका)

ससीतं राघवं नत्वा मारुतिं स्वगुरुं तथा ।
श्रीमारुतिप्रसादाय कुर्वे श्रीमारुतिस्तवम् ॥१॥

साम्प्रदायिक आचार्यों द्वारा भी उन्हें अयोध्या का ही मूल निवासी स्वीकार किया गया है। और अगस्त्य संहिता तथा भविष्य पुराण में भी उनका दाक्षिणात्य होना सिद्ध नही है अस्तु यह प्रलाप पूर्ण मिथ्या है कि वे दक्षिण से थे। श्री अनन्तानन्द स्वामी जी ने ही अपने शिष्य श्री कृष्णदास पयोहारी जी को श्री सम्प्रदाय की गुरु परम्परा का उपदेश किया है जिसे स्वयं अग्रदेवाचार्य जी ने लिपिबद्ध किया है यथा प्रमाण -

"परधाम्नि स्थितो रामः पुण्डरीकायतेक्षणः।
सेवया परया जुष्टौ जानक्यै तारकं ददौ ॥
श्रियः श्रीरपि लोकानां दुखोद्धरणहेतवे।
हनूमते ददौ मन्त्रं सदा रामान्घ्रि सेवने ॥"

इतना कहने पर भी क्या किसी को भ्रम का अवकाश रह जाता है ?

प्रश्न (४) -

इसी प्रकार से श्रीअवध में बड़ी जगह के श्रीमान् श्रीरघुनाथप्रसादजी विरचित 'निजगुरु' नामक ग्रन्थ के तृतीय अध्याय में लिखा है कि :- 'रामानुजान्वये जातो राघवानन्द नामकः। तस्य शिष्यो महायोगी रामानन्दः प्रतापवान्' 'इसकी भाषा श्रीमहन्त राममनोहरप्रसादजी ने यों की है - श्रीमद्रामानुज सम्प्रदाय में 'श्रीराघवानन्द नामके श्रीवैष्णव हुए। उनके शिष्य महायोगी प्रतापवान् श्रीरामानन्दजी हुए। एवं उसमें प्राचीन गुरुपरम्परा भी छपी है।

उत्तर - अभी ऊपर ही हमने श्री राघवानन्द जी महाराज की कृति का प्रमाण देकर उन्हें श्रीसीता प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय का आचार्य सिद्ध किया है फिर वे "रामानुजान्वये"

कैसे हो सकते हैं। यदि वह होगा भी तो "श्रीरामान्वये" यह होना ही समीचीन पक्ष है। स्वामी भगवदाचार्य जी ने अपने लेख "किला टूट गया" में उस निज गुरु ग्रन्थ के विषय में स्पष्ट लिखा है कि उस ग्रन्थ में भी परम्परा का आरम्भ श्री सीताराम जी से है।

श्री रघुनाथ प्रसाद जी स्वयं रसिक सम्प्रदाय के आचार्य हैं जिस रसिकोपसना के वे उपासक थे वो उपासना रामानुज सम्प्रदाय में है ही नही तब यह प्रश्न ही निरर्थक है। रसिक प्रकाश भक्तमाल के लेखक स्वामी युगलप्रिया जी ने उन्हें रसिक रस का ही स्वादी बताया है यथा -

रसिक प्रकाश भक्तमाल पृष्ठ ४०

* श्रीस्वामी रघुनाथप्रसादजी का जीवन चरित *

मूल—श्रीरघुनाथ प्रसाद रसिक रस लह्यो अनादी।
ज्यों गुंगे गुड़ खाय सरस रस रास के स्वादी॥
परम धीर गम्भीर गुरू की वृत्ति निबाही।
काल करालहिं बचे सचे दशधा प्रिय जाही।
तापिनी जंत्र सेवा सरस भजन प्रगट बपु अवतरे।
रामचरण से शिष्य जिन हम से विमुखन उद्धरे॥३७॥

प्रश्न ५ -

बड़े स्थान के श्रीमान् वैष्णवभूषण श्रीराममनोहर प्रसादजी का 'श्रीसंप्रदायदिक्प्रदर्शनम्' ग्रन्थ मुझे प्राप्त हुआ है जिसमें दोनों सम्प्रदायों की एकता में अनेक साक्ष्य प्रस्तुत किये गये हैं।

उत्तर - हमें भी बड़े स्थान के महान वैष्णव आचार्य स्वामी भगवदाचार्य जी जो स्वामी राममनोहर प्रसाद जी के ही पट्ट शिष्य थे उनका लिखा "श्री सम्प्रदाय रक्षा" ग्रन्थ प्राप्त हुआ है जो उक्त पुस्तक "श्री सम्प्रदायदिक्प्रदर्शनम्" का अक्षरसः खण्डन है। उसमें दोनों सम्प्रदाय की अनेकता के अनेकों साक्ष्य प्रस्तुत किए गए हैं।

प्रश्न ६ -

पं. श्रीरघुवरशरणजी की वैष्णवमताब्जभास्कर की अर्थप्रकाशिकाटीका में भी श्रीराघवानन्दजी को श्री रामानुजीयसम्प्रदाय का ही माना गया है।

उत्तर - पण्डित रघुवरशरण जी तो क्या उनके गुरु उनके गुरु भाई या कोई भी अन्य रामानन्दीय कहलाने वाला व्यक्ति अनभिज्ञता के कारण भ्रम फैलाने वाले लोगों द्वारा भ्रमित होकर कुछ भी लिख दे तो क्या उसे प्रमाण मान लिया जाए ? यह कैसी मूर्खता का प्रलाप है ! कोई लिखदे कि आपके पिता फलाना फलाना हैं तो क्या आप उसे स्वीकार कर लेंगे। जब हमारी परम्परा शास्त्र सिद्ध है तब किसी प्राकृत व्यक्ति के प्रमाण को उससे श्रेष्ठ कैसे माना जा सकता है ?

प्रश्न ७ -

श्रीदेवमुरारिस्वामीजी के शिष्य श्रीमलूकजीमहाराज ने 'श्रीगुरुप्रणाली- निष्ठा' में इस तरह लिखा है-

श्रीशं श्रीपृतनापतिं शठरिपुं श्रीनाथपद्माक्षकौ
रामं यामुनपूरणौ यतिपतिं गोविन्दभट्टारकौ।
वेदान्तिकलिवैरिकृष्णशरणौ लोकार्यशैलेशकौ
श्रीवानाद्रिपतिं पुनर्यतिपतिं वन्दे गुरुणां गुरुम् ॥
श्रीमद्राघवदेशिकः सुमतिमाञ्छरीभाष्यकारान्वये
जातस्तस्य च देशिको हि भगवाञ्छरीराममन्त्राश्रयः।
रामानन्दगुरुः प्रयागनगरे शिष्यै द्विषड्भिर्युतः,
लोकानां हितवाञ्छिताय सुतरां जातस्त्वसौ रक्षकः ॥
अतः रामानन्द स्वामी जी रामानुजीय गुरु परम्परा से ही हैं

उत्तर - इस गुरु परम्परा का थोड़ा अवलोकन आपने कर लिया होता तो इसकी अप्रामाणिकता का दर्शन आपको अवश्य हो गया होता लेकिन आप ने तो नकलची बालक की तरह केवल इसे रामटहलदास के लेख से ज्यों का त्यों छाप दिया ! अरे कुछ विचार तो किया होता प्रोफेसर साहब !

आइए इस परम्परा का अवलोकन करते हैं इसमें क्या लिखा है -
श्रीश नारायण
श्री लक्ष्मी
विश्वकसेन
शठकोप स्वामी
श्रीनाथमुनि
पुण्डरीकाक्ष
राम मिश्र
यामुन मुनि
पूर्ण स्वामी
रामानुज स्वामी
गोविंदाचार्य
पराशर भट्ट
वेदांती स्वामी
कलि वैरी
कृष्णपाद स्वामी
लोकाचार्य
शैलेश स्वामी
वरवर मुनि स्वामी
यतिपति श्री राघवानन्द जी
श्री रामानन्द जी

जो श्लोक अपने बोले उसके आधार पर यह गुरु परम्परा बनती है।

इस गुरु परम्परा में एक महान दोष है उसे हम उद्धृत करते हैं -

इस गुरु परम्परा में वरवर मुनि स्वामी के बाद स्वामी राघवानन्द स्वामी जी का नाम आया है। राघवानन्द स्वामी जी का काल 13वीं(अर्थात १२०० से १३०० के बीच)

शताब्दी ही सभी इतिहासकारों ने स्वीकार किया है और वरवर मुनि स्वामी तो रामानुज सम्प्रदाय के ग्रंथों के अनुसार १३७० ईस्वी में जन्में हैं तब वे उनके गुरु कैसे हो सकते हैं। यदि कहो कि वरवर मुनि स्वामी के बाद के बीच की गुरु परम्परा नहीं बताई तो यह मूर्खतापूर्ण तर्क है क्योंकि उससे पहले तो एक एक गुरु का नाम लिया गया है अतः यह परम्परा खुद ही असत्य है। क्योंकि इस परम्परा के विपरीत आपके रामानन्द सम्प्रदाय और रामानुज सम्प्रदाय को एक करने का भगीरथ प्रयास करने वाले रामटहलदास द्वारा विकृत रामार्चन पद्धति में जो रामानन्द सम्प्रदाय की गुरु परम्परा उन्होंने बताई है वो इस प्रकार है

रामानन्दबुधो दयाजलनिधिं श्रीराघवानन्दनं
श्रीमन्तं मुनिपुङ्गवं च हरियानन्दं श्रियानन्दकम्।
देवानन्दमथो सदागुणगणैराढ्यं मुनीशंवरं
द्वारानन्दमुनिं मुनीश्वरवरं रामेश्वरं सद्वरम्॥
श्रीमन्तं मुनिवर्यमेव च सदाचार्यं च गंगाधरं
वन्द्यं तं पुरुषोत्तमं च सद्वरं, देवाधिपं सद्वरम्।
श्री विद्यागुणवारिधिं मुनिवरं श्रीमाधवाचार्यकं
वैराग्यादिनिधिं गुणैकनिलयं श्रीवोपदेवं कविम्॥
कूरेशं यतिराजमद्भुतगुणं रामानुजं सद्वरं पूर्णं
श्रीमुनि यामुनं मुनिवरं श्रीराममिश्रं तथा।
श्रीमन्तं मुनिपुण्डरीकनयनं नाथं मुनिं श्रीशठ
द्वेषं श्रीपूतनापतिं जनकजां रामं सदा संश्रये॥

इसके अनुसार गुरुपरम्परा यह है -

श्री राम
श्री सीता
विश्वकसेन
श्री शठकोप
नाथ मुनि

पुण्डरीकाक्ष स्वामी
राम मिश्र
यामुन मुनि
महापूर्ण स्वामी
रामानुज स्वामी
कूरेश स्वामी
बोपदेव स्वामी
माधवाचार्य स्वामी
देवाधिपाचार्य
पुरुषोत्तमाचार्य
गंगाधराचार्य
सदाचार्य
रामेश्वराचार्य
द्वारानन्द
देवानन्द
श्रियानन्द
हरियानन्द
राघवानन्द
रामानन्द

अब ये वाली गुरु परम्परा आपने जो प्रश्न में गुरु परम्परा दिखाई है जो स्वयं राम टहल दास ने प्रश्न किए थे उन्ही राम टहल दास द्वारा यह दूसरी रामानंदी गुरु परम्परा देख लीजिए दोनों में कितना महान भेद है यह कोई भी समझदार समझ सकता है। राम टहल दास का यह आक्षेप उनके द्वारा ही सम्पादित एक अन्य गुरु परम्परा से कट गया तब प्रोफेसर जी ! आप इसे बिना जाने उनके इस आक्षेप को कैसे छाप डाले ! क्या आपको इतना भी ज्ञान नही हुआ कि इसकी मीमांसा कर लिया जाए। आप तो मीमांसाकाचार्य कहलाते हैं क्यों मैं सही कह रहा हूं न प्रोफेसर साहब ! तब इस तथ्य की मीमांसा आपने कैसे नही की ? आपकी इस मूर्खता पर हमें बहुत खेद हो रहा है।

प्रश्न ८ -

डाकोर, खाकचौक स्थान के श्रीमहान्तस्वामी श्रीमङ्गलदासजी महाराज के प्रशिष्य श्री पं. गोपालदास ने 'श्री वैष्णवधर्मरत्नाकर' ग्रन्थ में श्रीरामानन्दाचार्यजी का सम्बन्ध श्रीरामानुजाचार्य जी के साथ ही बतलाया है। वहीं बारहवें अध्याय में प्राचीन गुरुपरम्परा भी प्रकाशित है। उक्त ग्रन्थ खेमराजकृष्णदास, मुम्बई से प्रकाशित है। डाकौर-इन्दौर के खालसावाले भी उसी परम्परा को स्वीकार करते है। उनकी सभा की नोटिसों में भी -

'श्रीमते रामानुजाय नमः' और 'श्रीमते रामानन्दाय नमः', ऐसा दोनों नाम छपते हैं। बड़ा स्थान, दारागञ्ज, प्रयाग में भी उक्त नाम ही अङ्कित मिलते हैं।

उत्तर - रामानन्द स्वामी जी का रामानुज का नित्य सम्बन्ध है यह तो हम सब स्वीकार करते हैं। श्री रामानुज लक्ष्मण हैं श्री रामानन्द स्वामी जी स्वयं श्री राम हैं। रामानुज सेवक हैं और रामानन्द स्वामी हैं ये तो सारा जगत जानता है लक्ष्मण जी श्री राम के नित्य सेवक हैं। तब इस दृष्टि से तो उनका ही क्या आपका और हमारा भी नित्य सम्बन्ध है क्योंकि सभी श्री राम के ही शेष हैं अस्तु हमारा नित्य सम्बन्ध तो है ही लेकिन गुरु परम्परा अलग अलग चली है। जैसे बर्फ पानी और भाप एक ही तत्व है फिर भी अलग अलग है रूप और प्रयोग दृष्टि से।

डाकोर खालसावाले क्या बड़े बड़े सिद्ध भी भ्रम के प्रभाव में आजाते हैं तब खालसा वाले अथवा गोपालदास जी भ्रम के प्रभाव में कुछ भी लिख ही सकते हैं जब हमारी गुरु परंपरा शास्त्र में सीता जी से सिद्ध है तब अन्यों की बात पर कोई मूर्ख ही भरोसा करेगा !

यदि नोटिसों में "श्रीमते रामानुजाय नमः" लिख देने से आप दोनों परम्परा को खिचड़ी की तरह से मिलाने लगेंगे और इसे आक्षेप रूप में रखेंगे यह उन रामानंदियों पता होता तो वे कभी रामानुज स्वामी को प्रणाम न करते यदि आपको इतनी ही

समस्या है तो रामानुज स्वामी को प्रणाम न करें ? आप ही बताइए कि क्या हम रामानुज स्वामी को प्रणाम न करें ? हम लोग आपके जैसे नही हैं ! हम सभी आचार्यो को प्रणाम करते हैं। इसलिए यह तर्क भी पूर्ण रूप से खण्डित होता है।

प्रश्न ९

श्रीस्वामी खोजीजी की दारामादी, पालड़ी स्थान की गुरुपरम्परा में भी यह दोहा प्राप्त होता है-

श्रीरामानुजवंश में भये राघवानन्द। तिनके श्रीरामानन्दजी ज्यों तारन में चन्द॥

एवञ्च श्रीराघवानन्दजी श्रीरामानुजीय परम्परा के ही हैं, यह बात सिद्ध होती है।

उत्तर - वहां गुरु परम्परा में "श्री सम्प्रदाय वंश में भए राघवानन्द" यह लिखा है। पण्डित गोपालदास जी ने वहां प्रकोष्ठ में "श्री रामानुज वंश" यह पद अलग से जोड़ा है। आगे वही प्रमाण रामटहल दास ने प्रस्तुत कर दिया। ऐसे हम भी लिख सकते हैं कि शठकोप को विश्वकसेन से राम मंत्र ही मिला था। इसलिए यह सब निरर्थक है।

श्रीरामकबीरजी की पञ्चमात्रा में श्रीगोरक्षनाथजी के -

कौन तुम्हारा आदि मूल है कौन तुम्हारी शाखा।
कौन ध्यान में रमता योगी कौन पुरुष ने भाखा॥

इस प्रश्न के उत्तर में श्रीकबीरदासजी ने कुछ ऐसा कहा है -

आदि नारायण मूल हमारा रामानुज की शाखा।
ररंकार में रमता योगी श्रीगुरुरामानन्दजी भाखा॥

उत्तर - आदि नारायण तो श्री राम ही हैं। सभी नारायण स्वरूपों के स्त्रोत श्री रामचन्द्र भगवान ही हैं। इसके आगे "रामानूक शब्द" को सम्प्रदाय संकरों ने "रामानुज" कर दिया है इसलिए यहां "रामानूक की शाखा" ऐसा वचन था इसका अर्थ यह है श्री राम जी से जितनी भक्ति शाखाएं प्रवर्तित हुई हैं उन्ही में से एक शाखा जो रामोपासना की है जिसका प्रवर्तन श्री पराम्बा भगवती जानकी जी द्वारा हुआ है उसी शाखा से हम हैं और आगे तो श्री रामानन्द भगवान का नाम लिया ही उन्होंने। और रामानन्द भगवान के रकार में रमने की बात उन्होंने कही अर्थात रामोपासना के ही प्रवर्धक थे तब वे रामानुज स्वामी जी जिन्होंने श्रीभाष्य में नारायणोपासना का विधान किया है उनका रामोपासना का ही विधान करने वाले श्री रामानन्द स्वामी जी से गुरु परम्परया सम्बन्ध कैसे हो सकता है ?

प्रश्न १०

सत्यकबीर जी बोधसागर में लिखा है -

प्रथम श्रीसम्प्रदाय बखानो।
रामानुज आचारज मानो॥
प्रथमे नारायण कहो द्वितीये लक्ष्मी जान।
विष्वक्सेन तृतीय कहों पुनि शठकोप बखान॥
पञ्चम श्रीनाथ कहीँ पुण्डरीकाक्ष है षष्ठ।
राममिश्र सतये कहै यामुनाचार्य अष्ट॥
नौमें पूर्णाचार्य हैं रामानुज हैं तासु।
ग्यारहवें देवाचार्य हैं हरियानन्द हैं जासु॥
तासु राघवानन्दजी ताके रामानन्द।
पंद्रहे रामानन्द के शिष्य अनन्तानन्द॥

क्रमबद्ध न होने पर भी यह श्रीगुरुपरम्परा श्रीरामानन्दाचार्यजी का श्रीरामानुजाचार्य जी से संबन्ध स्थापित करती है।

उत्तर - अरे प्रोफेसर साहब ! यह परम्परा जो आप बता रहे हैं आप खुद ही कह रहे है क्रम बद्ध नहीं है तब यह परम्परा कैसे है इस पर ही प्रश्न चिन्ह खड़ा हो गया ? क्योंकि परम्परा तो क्रमबद्ध ही होती है। उन्होंने वहां प्रत्यक पंक्ति में संख्या कही है इसलिए ये आपका कथन ही भ्रांतिपूर्ण है कि लेखक ने क्रम नहीं दिया है - उन्होंने रामानुज स्वामी के सीधे बाद ग्यारहवें स्थान पर देवाचार्य लिखा है।

लेकिन ये क्या ? ये जो परम्परा है यह तो उस परम्परा से मेल ही नहीं खाती जिसको राम टहल दास जी ने रामार्चन पद्धति में स्वयं रामानन्द जी द्वारा कही हुई परम्परा कहकर प्रचारित किया था। श्रोताओं की सुविधा हेतु मैं वो परम्परा फिर से बता दे रहा हूं -

श्री राम
श्री सीता
विश्वकसेन
श्री शठकोप
नाथ मुनि
पुण्डरीकाक्ष स्वामी
राम मिश्र
यामुन मुनि
महापूर्ण स्वामी
रामानुज स्वामी
कूरेश स्वामी
बोपदेव स्वामी
माधवाचार्य स्वामी
देवाधिपाचार्य
पुरुषोत्तमाचार्य
गंगाधराचार्य
सदाचार्य
रामेश्वराचार्य

द्वारानन्द
देवानन्द
श्रियानन्द
हरियानन्द
राघवानन्द
रामानन्द

इसे स्वयं रामानन्द जी का रमार्चन पद्धति में लिखा हुआ बताकर रामटहल दास जी ने छपाया और रामटहल दास जी ने कबीर जी के ग्रन्थ की यह वाली गुरु परम्परा का प्रश्न भी खड़ा कर दिया तब इससे सुनने वाले जान सकते हैं कि उनकी खुद ही वाणी में दोहरी बातें निकल के आ रही हैं। तो किस गुरु परम्परा को मानें। आप कम से कम आक्षेप करने के लिए सारे संकर लोग एक साथ पहले गोष्ठी करिए और मंथन करके रामानंदीय लोगों को रामानुज संप्रदाय से जोड़ने हेतु कम से कम एक ऐसी गुरु परंपरा जिसपर सारे विरोधी जन एक मत हों वह तो प्रस्तुत करिए। हम क्या खंडन करें इसका आपके और रामटहल दास का एक आक्षेप दूसरे ही आक्षेप से कर जाता है। इससे पता चलता है कि आप कितने स्थूल मीमांसक हैं प्रोफेसर साहब! खैर छोड़िए आपको कहां सुनना है।

बोधसागर वाली गुरु परम्परा में रामानन्द स्वामी जी को रामानुज स्वामी के चौथी पीढ़ी का बताया गया है।

अगस्त्य संहिता के अनुसार स्वामी जी का प्रदुर्भाव दो अलग अलग रूप से स्वीकार किया गया है यथा प्रमाण -

अगस्त्य संहिता भविष्योत्तर खण्ड के १३२ अध्याय में देखिए -

श्लोक संख्या ७ से -

मनः कर्ताऽवताराय स्मृत्वाथो स्वं प्रतिश्रुतम्।

खं नभो वेद वेद प्रमिते वर्षे गते कलौ ॥७॥
कालिन्दी जाह्नवीसङ्गशोभिते देवपूजिते ।
तीर्थराजे महापुण्ये प्रयागे तीर्थ उत्तमे ॥८॥
गृहे श्रीपुण्यसदनद्विजातेर्भूरिकर्मणः ।
योगिनो योगयुक्तस्य कान्यकुब्जशिरोमणेः ॥९॥
पतिसेवा परा तस्य सुशीला गृहिणी ततः ।
माघकृष्णस्य सप्तम्यां शुभधर्मप्रवर्तके ॥१०॥
सप्तदण्डोद्गते सूर्ये सिद्धयोगयुजिप्रभुः ।
नक्षत्रे त्वष्टदैवत्ये कुम्भलग्ने शुभग्रहे ॥११॥
एवं सर्वगुणोपेते देशे काले च माधवः ।
गुण्ये पुण्ये शरण्यः स शरणागतवत्सलः ॥१२॥
आविर्भूतो महायोगी द्वितीय इव भास्करः ।
रामानन्द इतिख्यातो लोकोद्धरण कारणः ॥१३॥

कलियुग के चार हजार चारसौ वर्ष (४४००) यानी विक्रमसंवत् के बारहसौ छप्पन (१३५६) व्यतीत हो जाने पर श्रीगंगा एवं यमुना के पवित्र संगम से सुशोभित तथा देवताओं से पूजित और सभी तीर्थो में अति श्रेष्ठ महान् पुण्यमय प्रयाग नाम से लोकप्रसिद्ध तीर्थराज में वशिष्ठ गोत्रीय त्रिप्रवरान्वित शुक्लयजुर्वेदीय ब्राह्मणों में श्रेष्ठ कान्यकुब्ज ब्राह्मण जो योगयुक्त एवं श्रीरामचन्द्रजी के आराधना रूप भूरिकर्म अति उत्तम कर्म को सदा करनेवाले हैं उन योगी श्रीपुण्यसदन शर्माजी नाम के ब्राह्मण के यहा पतिव्रता में प्रधान श्रीसुशीलाजी नाम की श्रीशर्माजी की धर्मपति होगी उन्ही पतिव्रता देवी के गर्भ से माघकृष्ण पक्ष को सभी तिथि के शुभ दिन में जबकि लोकधर्म प्रवर्तक श्रीसूर्य भगवान् के सात दण्ड चले होंगे एवं सिद्ध योग युक्त चित्रा नक्षत्र तथा कुम्भ लग्न और सभी ग्रहों के शुभ स्थान में होने पर एवं सभी गुणों से युक्त पावन काल में तथा सभी गुणों से संयुक्त अतिपवित्र प्रदेश प्रयागराज में सभी साधकों के उद्धार के कारणरूप शरणागतवत्सल महान् योगी शरण में आये सभी जीवों का रक्षक (रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले इस आगम प्रमाण से बोधित) स्वयं सर्वेश्वर श्रीरामजी ही दीप से उत्पन्न दूसरे दीप के समान आविर्भूत होकर "रामानन्द" जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य, नाम से जगत में विख्यात होंगे।

यहां पर एक पाठ भेद भी मिलता है जिसमें कहा है -

खं नभो लोक वेद प्रमिते वर्षे गते कलौ ॥

इस पाठ के अनुसार कलियुग के ४३०० वर्ष बाद आचार्य जी का प्रदर्भाव हुआ उसके अनुसार उनका प्राकट्य संवत १२५६ अर्थात ११९९ ईस्वी में हुआ।

यदि हम इसमें दूसरा प्रमाण जिसमें कहा गया कि आचार्य भगवान का प्राकट्य ११९९ ईस्वी में हुआ ऐसा भी मान लें तो भी श्री रामानुज स्वामी जी जो १०१७ ईस्वी में हुआ और रामानन्द स्वामी जी का ११९९ ईस्वी तब दोनों के प्राकट्य में १८२ साल का अन्तर है। अब प्रश्न यह है कि १८० साल के भीतर ४ आचार्य कैसे रखे जा सकते हैं जबकि रामानुज सम्प्रदाय के भीतर रामानुज स्वामी के कोई भी शिष्य देवानंद नाम के नहीं हुए। यदि हुए हैं तो इसके लिए आपके पास क्या प्रमाण हैं आप उन्हें प्रस्तुत करें।

प्रश्न ११ -
श्रीरामानन्दीय संप्रदाय में श्रीअग्रस्वामीजी एक सिद्ध महापुरुष हुए हैं जिनके द्वारा संग्रहीत 'आनन्द तत्त्वदीपिका, चौंसठवें पटल के इन श्लोकों से भी दोनों सम्प्रदायों का सम्बन्ध सिद्ध होता है -

अथ वक्ष्ये श्रीगुरूणां सम्प्रदायचतुष्टयम्।
तथापि प्रथमं श्रीमद्रामानुजगुरोः क्रमात् ॥
रामानुजगुरोः किं वा ध्यानस्थानं किमुच्यते ॥

उत्तर - अग्र स्वामी जी के न जाने कितने ही ग्रन्थ आलस्य और प्रमाद वश लोगों की गलती से लुप्त हो गए। उनके जो कुछ ग्रन्थ आज मिलते हैं उनके नाम हैं -
अष्टयाम पदावली
कुंडलियां

राम प्रपत्ति स्तोत्र
संस्कृत अष्टयाम
राम मंत्रराज परम्परा

इनमें से किसी में भी उन्होंने रामानुज सम्प्रदाय से अपना सम्बन्ध नहीं दिखाया है।

इसके विपरीत राम मंत्रराज परम्परा में उन्होंने

"पर धाम्नि स्थितो रामः पुण्डरीकायतेक्षणः। सेवया परया जुष्टौ जानक्यै तारकं ददौ"

इस परम्परा को लिपिबद्ध किया है जिसे सभी अनन्य रामानन्दीय आचार्यो ने मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है तब "आनन्द तत्त्व दीपिका" जो आज मिलता ही नहीं है उस ग्रन्थ का प्रमाण आप कैसे दे रहे है ? स्पष्ट है ये श्लोक राम टहल दास के बनाए हुए हैं क्योंकि न तो आज से 100 साल पहले राम टहल दास सम्पूर्ण आनन्द तत्त्व दीपिका को प्रकट करके उसे प्रस्तुत कर सके थे और न आज आप उस ग्रंथ को सामने दिखा सकते हैं। यदि दिखा सकते हैं तो दिखाइए हम उसे सहर्ष स्वीकार भी करेंगे और उसकी समीक्षा भी करेंगे।

प्रश्न १२

श्रीअग्रस्वामीजी के परमसिद्ध शिष्य श्रीनाभाजी हैं। श्री भक्तमाल में उनके ये वचन आकलनीय हैं-
रमा पद्धति रामानुज विष्णुस्वामि त्रिपुरारि।
निम्बादित्य सनकादि का मधुकर गुरुमुख चारि॥
विष्वक्सेन मुनिवर्य सुपुनि शठकोष प्रनीता।
वोपदेव भागवतलुप्त उघर्यो नवनीता॥
मङ्गलमुनि श्रीनाथ पुण्डरीकाक्ष परम यश।
राममिश्र रसराशि प्रगट परताप पराङ्कुश॥
यामुनमुनि श्रीरामानुज तिमिरहरण उदयभान।

सम्प्रदाय शिरोमणि सिन्धुजा रच्यो भक्तिवितान॥
अन्य आचार्यों के पश्चात्

देवाचारज प्रथम द्वितीय महामहिमा हरियानन्द॥
तस्य राघवानन्द भये भक्तन को मानन्द।
तत्रावलम्ब पृथिवी करि वशि काशी थाई॥
चार वर्ण आश्रम सबही को भक्ति दृढ़ाई॥
तिनके श्रीरामानन्द प्रगट विश्वजिन मङ्गल वपु धर्यो।
श्रीरामानुज पद्धति-प्रताप अवनि अमृत है अनुसर्यो॥

विश्व के किसी भी साधु पुरुष को श्रीभक्तमाल की प्रामाणिकता पर सन्देह नहीं हो सकता है। इसके अनुसार दोनों संप्रदायों की एकता वाला पक्ष अधिक विश्वसनीय लगता है।

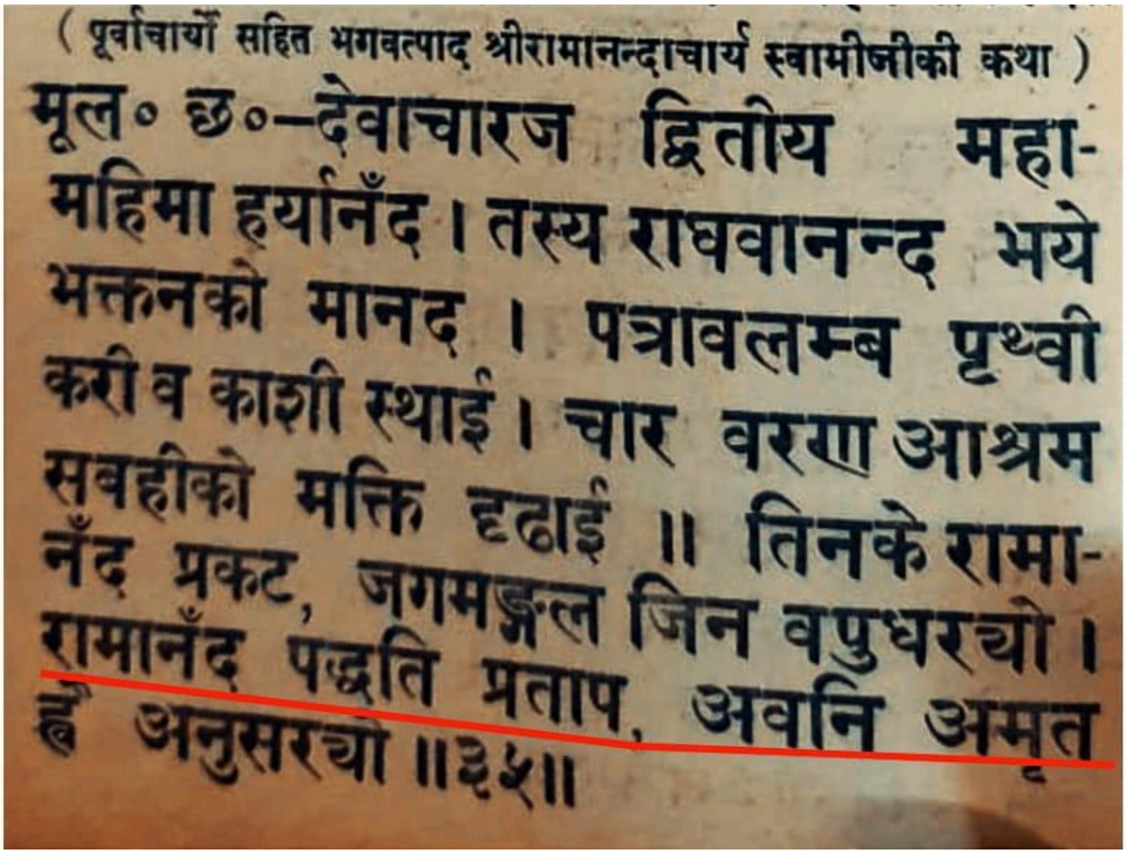
उत्तर - प्रोफेसर साहब ! यहां राम टहल दास ने चतुराई से अलग अलग छप्पय को एक ही जगह लिख दिया ताकि लोगों को यह भ्रम हो कि नाभा जी ने सब कुछ क्रम से लिखा है।

उत्तर - स्वामी नाभा दास जी के ग्रंथ से भी पूर्व काल में सम्प्रदाय संकर सम्प्रदाय द्रोहियों द्वारा बदलाव किए गए हैं और अनेक जगह पर घाल मेल करने के कारण सबको यही भ्रम हो गया कि भक्तमाल में रामानुज और रामानन्द को एक गिनाया है।

नाभा दास जी ने ग्रन्थ में क्या लिखा है यद्यपि पुराने video में कह चुके हैं फिर से कह देते हैं ताकि प्रोफेसर साहब को समझ आ जाए -

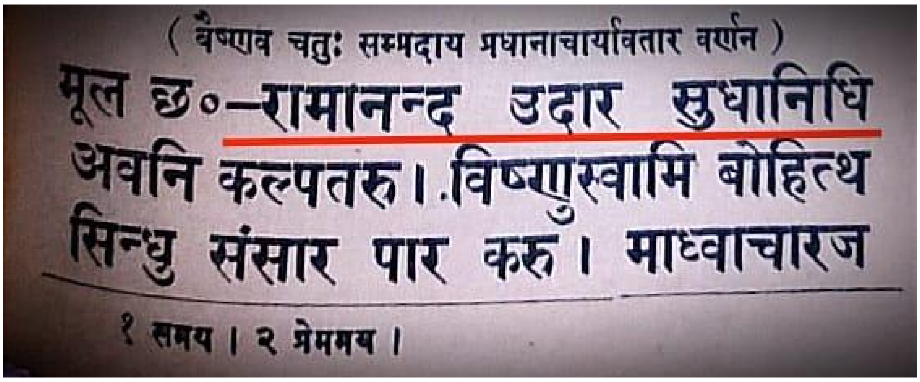
भक्तमाल की सबसे अधिक प्रामाणिक प्रति आज से ६४ वर्ष पूर्व ही श्री जानकी दास वैष्णव द्वारा प्रकाशित हो चुकी है उसमें

रामानुज पद्धति नही "रामानन्द पद्धति" ऐसा ही पाठ है और "रमा पद्धति रामानुज" के स्थान पर "रामानन्द श्री पद्धति" ऐसा ही पाठ है उसे आप सब देख लें -



( पूर्वाचार्यों सहित भगवत्पाद श्रीरामानन्दाचार्य स्वामीजीकी कथा )

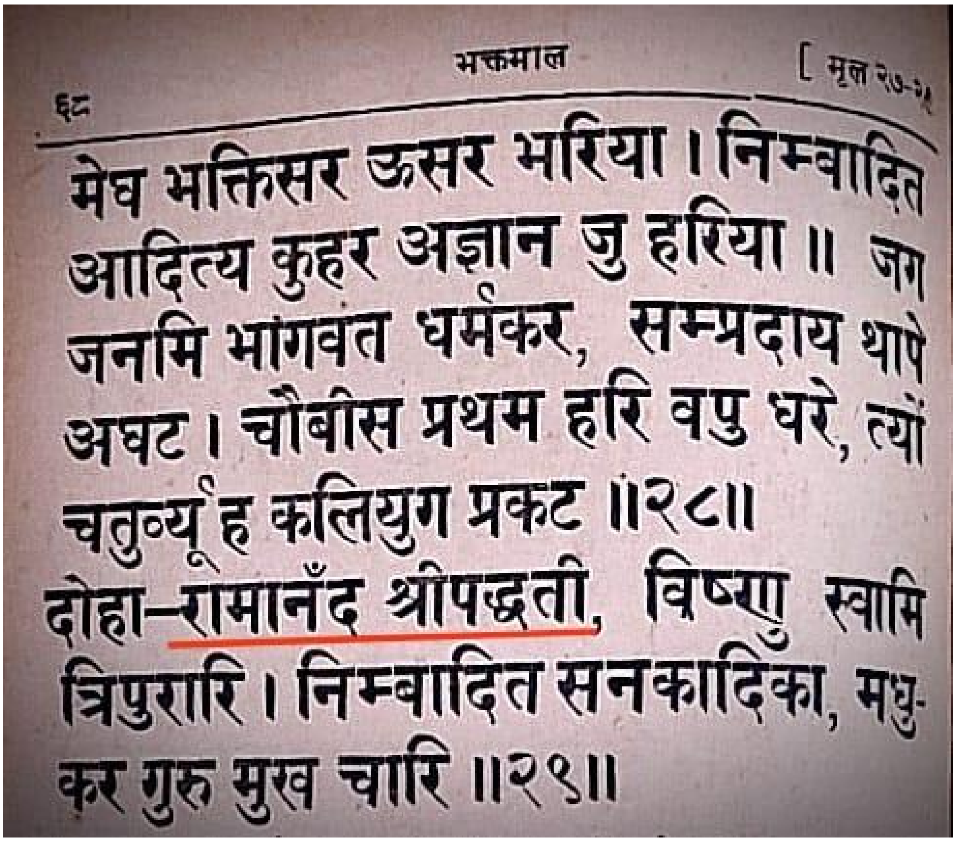
मूल० छ०—देवाचारज द्वितीय महा-
महिमा हर्यानँद। तस्य राघवानन्द भये
भक्तनको मानद। पत्रावलम्ब पृथ्वी
करी व काशी स्थाई। चार वरण आश्रम
सबहीको भक्ति दृढाई॥ तिनके रामा-
नँद प्रकट, जगमङ्गल जिन वपुधरचो।
रामानँद पद्धति प्रताप, अवनि अमृत
ह्वै अनुसरचो॥३५॥



( वैष्णव चतुः सम्प्रदाय प्रधानाचार्यावतार वर्णन )

मूल छ०—रामानन्द उदार सुधानिधि
अवनि कल्पतरु। विष्णुस्वामि बोहित्थ
सिन्धु संसार पार करु। माध्वाचारज

१ समय। २ प्रेममय।



६८ भक्तमाल [ मूल २७-२९

मेघ भक्तिसर ऊसर भरिया । निम्बादित आदित्य कुहर अज्ञान जु हरिया ॥ जग जनमि भागवंत धर्मकर, सम्प्रदाय थापे अघट । चौबीस प्रथम हरि वपु धरे, त्यों चतुर्व्यूह कलियुग प्रकट ॥२८॥

दोहा–रामानँद श्रीपद्धती, विष्णु स्वामि त्रिपुरारि । निम्बादित सनकादिका, मधुकर गुरु मुख चारि ॥२९॥

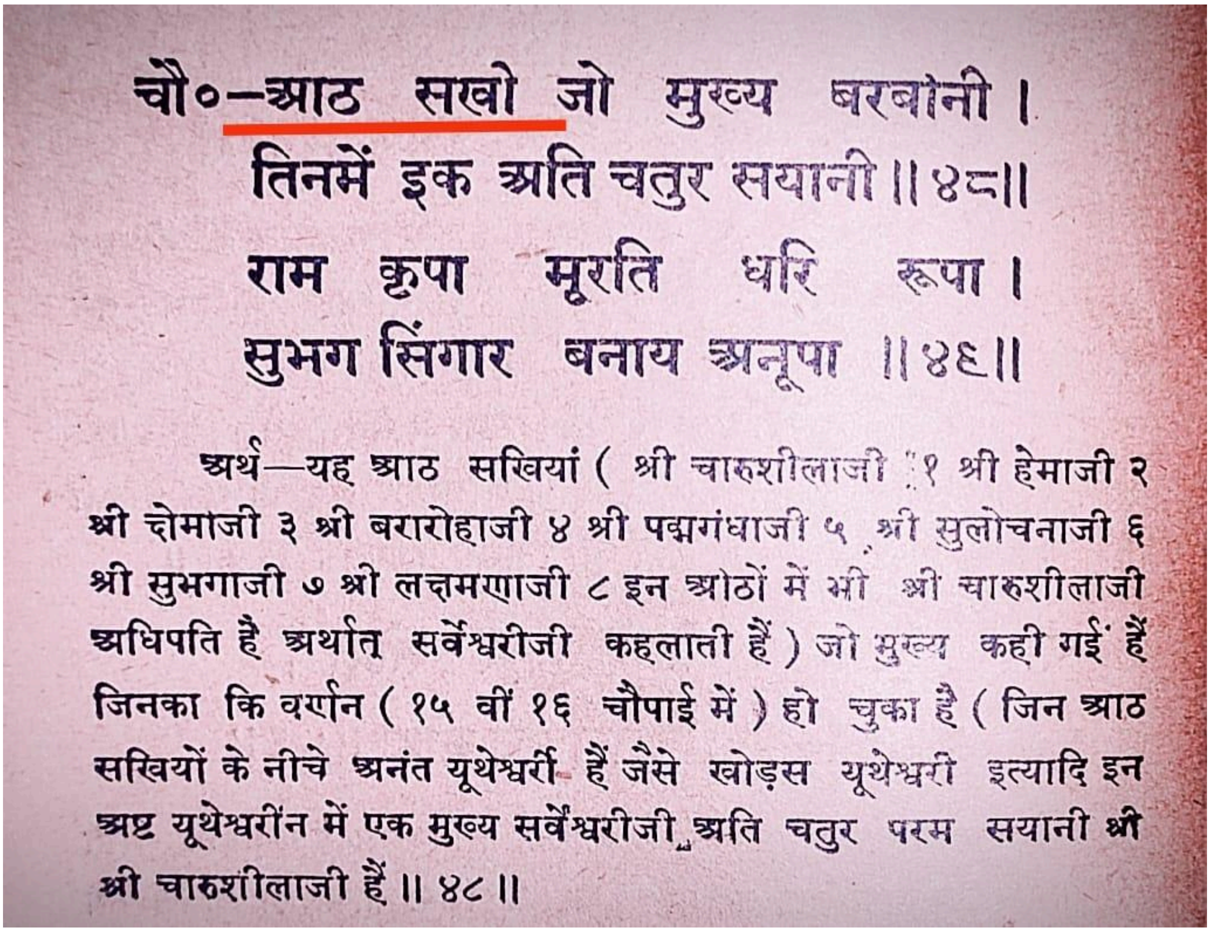
**उनके इस ग्रन्थ पर काशी संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ बलदेव उपाध्याय की भी सम्मति है जो इस प्रकार है -**

मैंने भी जानकीदासजी श्रीवैष्णव द्वारा सम्पादित 'भक्तमाल' को यत्रतत्र देखा। ग्रन्थ बड़े परिश्रम तथा मनोयोग के साथ सम्पादित किया गया है। प्रियादास जी की प्रख्यात टीका के साथ यह ग्रन्थ पहिले भी प्रकाशित था, परन्तु यह संस्करण इतः पूर्व संस्करणों से अनेक अंश में विशिष्ट है। **सम्पादक ने मूल तथा टीका के पाठ संशोधन के निमित्त अनेक प्राचीन हस्तलेखों का भी इसमें विवेक के साथ उपयोग किया है**। साथ ही साथ जिन महात्मानों के विषय में प्रियादास जी मौन हैं अथवा स्वल्पाक्षर में ही विवरण दिया है, उनका विवरण यहाँ विशेष रूप से श्री जानकीदास जी ने दिया है। इस प्रकार यह नूतन संस्करण मूल के उपबृंहण के साथ ही साथ प्रियादास जी की टीका का भी उपबृंहण प्रस्तुत करता है। **ऐसे सुन्दर तथा विद्वत्तापूर्ण, प्रामाणिक तथा सुविशुद्ध संस्करण के प्रस्तुतकर्ता जानकीदास जी भक्तों तथा साहित्य रसिकों के धन्यवाद के समुचित पात्र हैं**। मैं इस ग्रन्थ के बहुल प्रचार की कामना करता हूँ।

नाभादास जी परम गुरु भक्त थे। स्वामी अग्रदास जी ने श्री सीताराम से अपनी परम्परा मानी है तब नाभा दास जी कथमपि रामानुज स्वामी से रामानन्द सम्प्रदाय को नही मान सकते हैं।

रामानुज स्वामी की कथा अट्ठाइसवें छप्पय में है और रामानन्द स्वामी जी की 35वे छप्पय में है। तब उसे परम्परा कैसे माना जाए। नाभा जी ने परम्परामाल नही लिखी है भक्तमाल लिखी है।

और उनका एक ही ग्रन्थ नहीं है उनका एक दूसरा ग्रन्थ भी है जिसका नाम है राम अष्टयाम उसमें उन्होंने क्या कहा है वो देखिए -

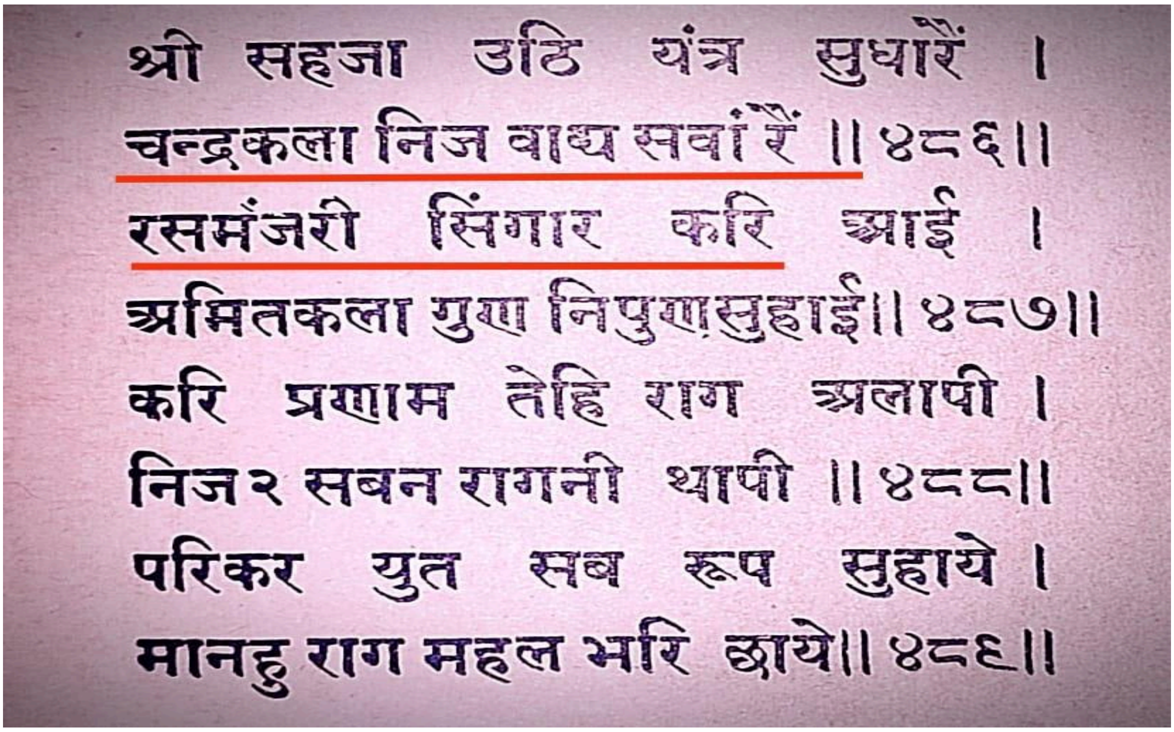


चौ०—आठ सखो जो मुख्य बखानी।
तिनमें इक अति चतुर सयानी ॥४८॥
राम कृपा मूरति धरि रूपा।
सुभग सिंगार बनाय अनूपा ॥४६॥

अर्थ—यह आठ सखियां ( श्री चारुशीलाजी १ श्री हेमाजी २ श्री चेमाजी ३ श्री बरारोहाजी ४ श्री पद्मगंधाजी ५ श्री सुलोचनाजी ६ श्री सुभगाजी ७ श्री लक्ष्मणाजी ८ इन आठों में भी श्री चारुशीलाजी अधिपति है अर्थात सर्वेश्वरीजी कहलाती हैं ) जो मुख्य कही गई हैं जिनका कि वर्णन ( १५ वीं १६ चौपाई में ) हो चुका है ( जिन आठ सखियों के नीचे अनंत यूथेश्वरी हैं जैसे खोड़स यूथेश्वरी इत्यादि इन अष्ट यूथेश्वरींन में एक मुख्य सर्वेश्वरीजी अति चतुर परम सयानी श्री श्री चारुशीलाजी हैं ॥ ४८ ॥

श्री नाभा स्वामी जी कह रहे हैं कि श्री रघुनाथ जी की मुख्य आठ सखी हैं जिसमें श्री चारुशिला जी सर्वेश्वरी हैं। आपका आक्षेप है कि नाभा जी रामानुज सम्प्रदाय के गुरु

परम्परा में है तो क्या रामानुज गुरु परम्परा में कही भी चारुशिला चन्द्रकला से संबद्ध अष्ट सखियों से घिरे हुए श्री सीतारामीय उपासना कही भी बताई गई है ?


श्री सहजा उठि यंत्र सुधारैं ।
चन्द्रकला निज वाद्य सवांरैं ।।४८६।।
रसमंजरी सिंगार करि आई ।
अमितकला गुण निपुणसुहाई।।४८७।।
करि प्रणाम तेहि राग अलापी ।
निज२ सबन रागनी थापी ।।४८८।।
परिकर युत सब रूप सुहाये ।
मानहु राग महल भरि छाये।।४८९।।

यहां पर स्वामी जी चन्द्रकला स्वामिनी की चर्चा करने के पश्चात स्वयं को रस मंजरी रूप में लिख रहे हैं। (नाभा जी सीता जी की "रस मंजरी" नाम की सहचरी हैं)। क्या रामानुज सम्प्रदाय में किसी भी आचार्य ने सीताराम जी की यह मंजरी उपासना की है या किसी भी आचार्य के मंजरी संबंधी नाम क्या कभी सुने गए हैं ?

और वैसे भी भक्तमाल पर जो आपने प्रश्न उठाया भक्तमाल में तो रामानुज सम्प्रदाय की ही गुरु परम्परा का क्रम नहीं बैठता यथा प्रमाण -

भक्तमाल छप्पय ३०
बिष्वकसेन मुनिवर्य सुपुनि शठकोप प्रनीता।
बोपदेव भागवत लुप्त उधर्यो नवनीता॥
मंगल मुनि श्रीनाथ पुंडरीकाच्छ परमजस।
राममिश्र रसरासि प्रगट परताप परांकुस॥
यामुन मुनि रामानुज तिमिरहरन उदय भान।
सँप्रदाय सिरोमनि सिंधुजा रच्यो भक्ति बित्तान॥३०॥

इसमें श्री लक्ष्मी जी को सम्प्रदाय शिरोमणि कहा उसके बाद प्रथम श्री विष्वक्सेन जी का नाम आया उसके पश्चात् श्री शठकोप जी का उसके पश्चात बोपदेव जी का उसके बाद  नाथ मुनि उसके बाद श्री पुण्डरीकाक्ष उसके बाद राममिश्र उसके बाद परांकुश मुनि उसके बाद यामुन मुनि उसके बाद रामानुज मुनि।

यदि इसे गुरु परम्परा मानें तो इस प्रकार बनेगा -

१. लक्ष्मी जी
२. विष्वक्सेन जी
३. शठकोप जी
४. बोपदेव जी
५. नाथ मुनि
६. परांकुश मुनि
७. यामुन मुनि
८. रामानुज स्वामी

विद्या भास्कर जी द्वारा जो कही हुई रामानुजीय परम्परा है वह इस प्रकार है

१. लक्ष्मी
२. विष्वक्सेन
३. शठकोप
४. नाथमुनि
५. पुण्डरीकाक्ष
६. राममिश्र
६. ईश्वर मुनि
७. यामुन मुनि
८. महापूर्ण स्वामी
९. रामानुज स्वामी

यह परम्परा तो भक्तमाल की परम्परा से भिन्न है अस्तु यह सिद्ध हुआ कि भक्तमाल में किसी सम्प्रदाय की क्रम बद्ध परम्परा नही है अस्तु यह कहना कि भक्तमाल में रामानुज से ही रामानन्द जी को सिद्ध किया है सर्वथा भ्रांत है।

यदि कहो कि हो सकता है जो भक्तमाल कि गुरु परम्परा हो वह भी सही है क्योंकि गुरु परम्परा रामानुज सम्प्रदाय में केवल दीक्षा ही नहीं ज्ञान उपदेश से भी मानी जाती है तो यह संभव नही क्योंकि -

१. भक्तमाल के अनुसार क्रम में बोपदेव के नाम के पश्चात् नाथ मुनि का नाम आया है इस अनुसार नाथ मुनि बाद में हुए हैं और बोपदेव पहले किन्तु इतिहास के अनुसार बोपदेव नाथ मुनि के लगभग ६६७ वर्ष बाद प्रकट हुए हैं तो यह क्रम सत्य नही हो सकता अस्तु भक्तमाल से किसी भी गुरु परम्परा के क्रम की प्राप्ति करना असम्भव है

२. यदि कहो की छप्पय में नीचे से ऊपर गिनना चाहिए पर तब तो और भारी भ्रम प्रकट हो जायेगा क्योंकि तब लक्ष्मी जी के बाद ही रामानुज स्वामी का नाम आ जायेगा।

इसलिए ग्रंथों, तर्क और सम्प्रदाय के प्रमाणों के अनुसार भक्तमाल में "रामानुज पद्धति प्रताप" के स्थान पर "रामानन्द पद्धति प्रताप" यही सही पाठ है ऐसा सिद्ध हुआ ।

प्रश्न १३
श्रीभक्तमाल के ऊपर रीवाँ के नरेश श्रीरघुराजसिंहजी ने भाषापद्यबद्ध टीका की है। श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस में यह ग्रन्थ छप चुका है। संस्कृतभक्तमाल में चारों वैष्णवों का परिचय देकर वे श्रीरामानन्दीय सिद्धों को श्रीरामानुजकुलोद्भव लिखे हैं। आचार्य के बारह शिष्यों के नाम के बाद उन्होंने यह श्लोक लिखा है -

ऐते चान्ये च बहवो रामानुजकुलोद्भवाः ।

**वैष्णवास्तस्य शिष्या यैः शिष्यैर्व्याप्तमिदं जगत् ॥**

उत्तर - रघुराज जी के पिता श्री विश्वनाथ सिंह जू देव को छोड़कर उनके सभी पूर्वज रामानुज सम्प्रदाय से दीक्षित थे इस कारण उनका रामानन्द सम्प्रदाय को रामानुज का अंग मानना उनका स्वमत है रामानन्द सम्प्रदाय और आर्ष ग्रंथों का मत नहीं है। उनके पिता श्री ने राम मंत्रराज प्रियादास जी से प्राप्त किया था और स्वयं रसिक उपासना में दीक्षित थे तब जब उनके पिता श्री रामानुजाचार्य से श्री रामानन्द स्वामी जी को नहीं मानते तो रघुराज सिंह जी का मत समीचीन कैसे हो सकता है अस्तु यह सब कोई ठोस प्रमाण की श्रेणी में नहीं आते!

श्री रघुराज सिंह जी के पिता श्री द्वारा रामोपासना का आरम्भ किनसे हुआ उसका प्रमाण हम दे रहे हैं यथा प्रमाण :-
महाराज श्री विश्वनाथ सिंह जू देव कृत अध्यात्म रामायण की व्यंग्य प्रकाशिका टीका के मंगलाचरण से उद्धृत -

अथ सूतो नैमिषारण्यवासिनो मुनीनध्यात्मरामायणं श्रावयिष्यन् श्रीरामभक्ति-
संप्रदायप्रवर्तकं गुरुस्वरूपं दक्षिणामूर्तिसंज्ञं श्रीमहादेवन्नमस्करोति अप्रमेयेति——अप्रमेयत्रयं

यहां स्पष्ट रूप से भगवान शंकर को उन्होंने राम भक्ति सम्प्रदाय का प्रवर्तकाचार्य माना है।

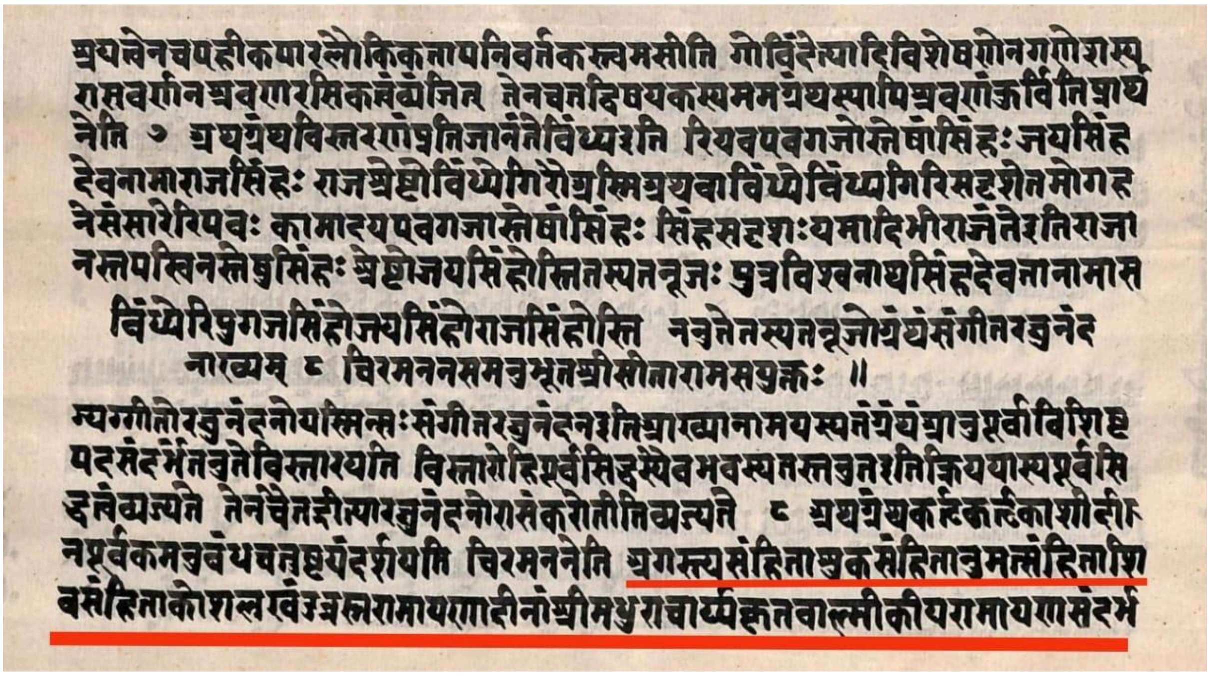
यही बात रामतापनीयोपनिषद में भी लिखी है स्वयं श्री राम ने भगवान शंकर को राम मंत्रराज की दीक्षा प्रदान की है। इससे यह सिद्ध होता है कि रघुराज सिंह जी के पिता श्री को राम भक्ति सम्प्रदाय के रहस्य का पूर्ण ज्ञान था और इस टीका में भी उन्होंने श्री राम को सर्वावतारी रूप से ही अपना उपास्य सिद्ध किया है अस्तु वे जानकी ब्रह्म रुद्र प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय की गुरु परम्परा को रामानुज का अंग कथमपि स्वीकार नहीं कर रहे हैं तब उनके पुत्र का यह वाक्य समीचीन पक्ष नहीं हो सकता।

विश्वनाथ सिंह जी ने एक और ग्रन्थ लिखा है संगीत रघुनंदन इसमें उन्होंने भगवान श्री राम के रास संबंधी चरित्र गाया है इसमें उन्होंने जिन ग्रंथों को प्रमाण माना है उन ग्रंथों में रामानन्द सम्प्रदाय की परम्परा को सीता जी से ही माना गया है इसका अर्थ केवल एक यही है कि उन्हें श्री सीता जी से ही रामानन्द सम्प्रदाय का होना मान्य था वरना वे इन ग्रंथों को प्रमाण मानते ही क्यों यथा प्रमाण -

संगीत रघुनंदन की पांडुलिपि जो रघुनाथ मंदिर पुस्तकालय द्वारा सुरक्षित है उसके पृष्ठ १२ से उद्धृत कर रहे हैं इसमें जो लाल चिन्ह से अंकित हैं उन ग्रंथों के नाम हैं -

पहले उन्होंने क्या लिखा है उसे हम बता रहे हैं फिर जो लाल चिन्ह से अंकित है वही पर वो ग्रन्थ के नाम लिखे हैं उसे हम दिखाएंगे -

अगस्त्यसंहिताशुकसंहिताहनुमत्संहिता शिवसंहिताकोशलखण्ड ब्रह्मरामायणादीनां श्रीमधुराचार्यकृतवाल्मीकीयरामायणसन्दर्भस्य च यच्चिरमननं तेन सम्यगनुभूतो यः श्रीसीतारामयोः रासस्तेन संयुक्तस्तद्दर्शनसंयुक्त इत्यर्थः।


अयत्वेन च पद्दीकपारलौकिकतापनिवर्तकत्वमसीति गोविंदेत्यादिविशेषणेन गणेशस्य
रासवर्णनश्रवणरसिकत्वं व्यंजितं तेन च तद्विषयकस्य मम ग्रंथस्यापि श्रवणाकांक्षेति प्रार्थ
नेति ७ अथ ग्रंथविस्तरणे प्रतिजानीते विंध्येश इति रियवपवगजोत्तंसोसिंह: जयसिंह
देवनामा राजसिंह: राजश्रेष्ठो विंध्यो गिरौ अस्मिन्ग्रंथे वा विंध्ये विंध्यगिरिसदृशेन मोगह
नेसे सारे रिपवः कामादय एव गजास्तेषां सिंह: सिंहसदृशः यमादिभीरराजते इति राजा
नस्तपस्विनस्तेषु सिंह: श्रेष्ठो जयसिंहोस्ति तस्य तनूजः पुत्र विश्वनाथसिंहदेवनामास
विंध्ये रिपुगजसिंहो जयसिंहो राजसिंहोस्ति तनूजो ग्रंथे संगीतरघुनंद
नाख्यम् ८ चिरमननसमनुभूतश्रीसीतारामसंयुक्तः ॥
अथ गीतो रघुनंदनो यस्मिन्सः संगीतरघुनंदन इति ग्रंथाख्यानामयस्य तं ग्रंथं ग्रानुपूर्वीविशिष्ट
पदसंदर्भं तनुते विस्तारयति विस्तारो हि पूर्वसिद्धस्यैव भवत्यतस्तनुत इति क्रियया स्य पूर्वसि
द्धत्वं व्यज्यते तेन चैतद्दीयोरघुनंदनो रासं करोतीति व्यज्यते ८ अथ ग्रंथं एककर्तृकाशीदी
नपूर्वकमनुबंधचतुष्टयं दर्शयति चिरमननेति अगस्त्यसंहिताशुकसंहिताहनुमत्संहिताशि
वसंहिताकोशलखंडब्रह्मरामायणादीनां श्रीमधुराचार्यकृतवाल्मीकीयरामायणसंदर्भ

वे स्पष्ट कहते हैं उन्होंने इन ग्रंथों का मनन किया है और इन ग्रंथों में श्री सीता जी से ही मंत्रराज परम्परा का उद्भव माना गया है। तब उनके पुत्र रघुराज सिंह जी का इसके विपरीत कथन कथमपि मान्य नहीं हो सकता है क्योंकि उनके पिता जी का ही यह मत नही है।

यह उन्नीसवी शताब्दी के पूर्वार्ध की पाण्डुलिपि है

प्रश्न १४

श्रीरसरङ्गमणि जी ने 'भक्तनामावली' नामक ग्रन्थ को भक्तमाल के आदि में प्रस्तुत किया है जहाँ यह लिखा मिलता है -

जयति स्वामि शठकोप महामति बोपदेव विभु ।
नाथमुनि पुण्डरीकाक्ष श्रीराममिश्र प्रभु ॥
जय यामुनमुनि महापूर्ण आचार्य अकामी ।
जय श्रीरामानुजाचार्य कुरुतारक स्वामी ॥

इनके अनन्तर भट्टार्क, वेदान्ती, लोकार्य, शैलेश, वरवरमुनि एवम् देवाचार्य आदि का स्मरण करके -

जय जय हरियानन्द राघवानन्द सुस्वामी ।
जय श्रीरामानन्द राम अवतार नमामी ॥

उत्तर - आपने ही कहा कि रसरंगमणि जी ने "भक्तनामावली" ग्रन्थ लिखा । प्रोफेसर साहब ! उन्होंने "परम्परानामावली" नही लिखी है महाराज !

विशिष्टाद्वैत की दो पृथक परम्परा है उसी विशिष्टाद्वैत के सम्बन्ध से उन्होंने दोनों सम्प्रदाय के आचार्यो की एक साथ वन्दना की है ।

यह अवश्य सत्य है पहले वे भी रामानुज सम्प्रदाय द्वारा फैलाए गए विभ्रम के कारण वे भी रामानुज और रामानन्द सम्प्रदाय को एक मानते थे लेकिन जब स्वामी भगवदाचार्य जी ने सशक्त आन्दोलन चलाया तब उन्हें भी इस भ्रम से मुक्ति मिली और उन्होंने श्री रामानन्द यशावली नाम का ग्रन्थ लिखा उसमें उन्होंने मंगलाचरण में सीताराम जी  को प्रणाम करके श्री रामानन्द जी को ही प्रणाम किया है रामानुजाचार्य जी को नही यथा प्रमाण :-

रामं कोमलश्यामसुन्दरतनुं पीताम्बरालंकृतम्
कोटीन्द्वर्कप्रकाशमानममलं राजीवनेत्रं विभुम्।
कैशोरं द्विभुजं धनुःशरधरं श्रीसीतया संयुतम्
वन्देऽहं भरतादिबन्धुसहितं राजाधिराजं परम् ॥१॥

फुल्लश्यामसरोजसुन्दरदृशी सौंदर्यसद्वैभवाम्
भास्वत्कोटितनुप्रभां स्वजनहृद्ध्वान्तापहां तापहाम्।
सीतां कोटिशरच्छशिच्छवियुतां श्रीरामपार्श्वेस्थिताम्
वन्देराघवराजपट्टमहिषी माधुर्यसीमामुखीम् ॥२॥

रामानन्दमहं वन्दे श्रीरामांशाऽवतारकम्।
आचार्याणां शिरोरत्नं मंत्रराजप्रचारकम् ॥३॥

आगे इस ग्रन्थ के अन्त में रामानन्द सम्प्रदाय के अनुयायियों को रामानन्दी कहकर सम्बोधित किया है न कि रामानुजानुयायी।

यह आचारज गुण अनुवादा। करण मोद मन हरण विषादा॥
जे जन गावहिं सुनहिं सप्रेमा। ते पावहिं सुख मंगल क्षेमा॥
गुरु आचारज चरण सनेहा। केवल प्रभु तोषण व्रत येहा॥
ताते रामानन्दिन काही। करिबो उचित उछाह सदाही॥
तासु जन्म दिन भे न अनन्दी। कहवावत श्री रामानन्दी॥

इसलिए श्री रामानन्द सम्प्रदाय को पश्चात उन्होंने स्वतन्त्र ही स्वीकार किया।

प्रश्न १५

रेवासा स्थान में विद्यमान 'श्रीरघुनाथलीलामृत' नामक ग्रन्थ है जिसमें श्री अग्रस्वामीजी ने लिखा है -

पञ्चसंस्कारसंपन्नाः पञ्चार्थज्ञाः पञ्चमोपायनिष्ठाः।
ते विष्णुभक्ताः पञ्चकालपरायणाः श्रीभाष्यकाराश्रिताः श्रीवैष्णवा निश्चिताः।

उत्तर - यह ग्रन्थ "रघुनाथलीलामृत" नाम से ही श्री राम जी के विषय सम्बन्धी ज्ञान को प्रकाशित करने वाला ग्रन्थ है तब आपका उक्त यह श्लोक "रघुनाथलीलामृत" इस उपाधि के अनुबंध चतुष्टय के ही विपरीत सिद्ध होता है क्योंकि आपका दिया श्लोक श्री वैष्णव की व्याख्या करने वाला श्लोक है और यह श्लोक देखकर इस ग्रन्थ की उपाधि "श्री वैष्णवलीलामृत" प्रतीत होती है "रघुनाथलीलामृत" नही।

दूसरी बात यह कि स्वामी अग्रदेवाचार्य जी ने स्वयं राम मंत्रराज परम्परा इस ग्रन्थ को लिपिबद्ध किया है यथा -

जिसमें श्री सीताराम जी से ही अपनी परम्परा मानी है यथा प्रमाण -
"परधाम्नि स्थितो रामः पुण्डरीकायतेक्षणः।
सेवया परया जुष्टो जानक्यै तारकं ददौ ॥"

जब यह वे लिख चुके हैं तब आप जिस ग्रन्थ का नाम ले रहे हैं उसकी उक्ति उनके द्वारा लिखे ग्रन्थ जो सम्पूर्ण प्राप्त है उसके साथ विसंगति होने के कारण असत्य ही प्रतीत होता है यदि आपके पास वह ग्रन्थ है तो उसे आप पूरा दिखाइए वह ग्रन्थ कहां से छपा कब छपा उसमें कितने अध्याय हैं ये सब जाने बिना अपने इसको कैसे उद्धृत कर दिया गया ?

प्रश्न १६ -

श्रीअग्रस्वामी जी का ही 'श्रीरामसारसंग्रह' ग्रन्थ बड़ा स्थान दारागंज प्रयाग से प्राप्त है जिसमें दोनों आचार्यों की वन्दना एक ही श्लोक में की गयी है -

श्रीधर्मं परिरक्षितुं हि सदयः शेषस्तु रामानुज
स्तत्संदर्शितमोक्षवर्त्मनि भृशं सिद्धान्तसारोदिते।

रामानन्दसुदेशिको हि भगवान् जातः स्वयं रक्षको
योगीन्द्राय गुरुश्च मे विजयते श्रीकृष्णदासो महान् ॥

उत्तर - आपने ही स्वयं प्रकट कर दिया कि यह ग्रन्थ दारागंज स्थान से प्राप्त है लेकिन आपने बड़ी चतुराई से इसके प्रकाशक और संशोधक का नाम नही लिया। विद्वज्जनों की जानकारी हेतु बता दूं कि यह ग्रन्थ दारागंज प्रयाग पीठ से पण्डित राम टहल दास द्वारा संशोधित एवं प्रकाशित किया गया था।

जिसमें उन्होंने स्वरचित श्लोकों को मंगलाचरण में रखकर इस ग्रंथ से छेड़ छाड़ की और इसके प्रारूप को ही परिवर्तित कर दिया। लेकिन फिर भी उस ग्रन्थ में बहुत से ऐसे वचन और उद्धरण हैं जो रामानन्द सम्प्रदाय से रामानुज सम्प्रदाय का पूर्ण भेद प्रकट करते हैं तब यह मंगलाचरण ही असंगत प्रतीत होता है यथा प्रमाण :-

मू० षडक्षरो महामंत्रोभूताक्ष्यक्षरकस्तथा ।
आदिकाव्योद्धृतोराम चरममंत्र इत्यपि ॥

तत्वरत्नावली भाषाटीकया संयुक्तः । ६५

मोक्षैकसाधनोद्भूतं मंत्र त्रयमिदंवरम् ।
स्वपरम्परया रीत्या मंत्रमध्यापयेद्गुरुः ॥९७॥

भाषा—मूल महामन्त्र रामषडक्षर तथा अक्षियाने २ भूत याने ५ दोपर पाँच मिलाने से २५ अक्षर का श्रीराम द्वयमन्त्र एवञ्च आदि काव्य श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण का सारभूत श्री रामचरम मंत्र ये ३ मन्त्र मोक्ष साधन का एक ही उपाय है इस मन्त्र त्रय याने रहस्यत्रय को पूर्वाचार्य गुरु परम्परानुकूल गुरुजी शिष्य को मन्त्रोपदेश देवैं । तत्रैव पुनरपि—

राम सार संग्रह पूर्व भाग के पृष्ठ ६५ को देखिये -

प्रश्न १७ -

चिरान छपरा के श्रीजीवारामजी के शिष्य श्रीजानकीरसिकशरणजी ने 'रसिकभक्तमाल' में लिखा है -

प्रथम ही श्रीशठकोप आदि पार्षद आये कलि की अनीति देखि मौनवृत्ति लये हैं ॥
श्रीरामानुज स्वामीहु प्रतिज्ञा करि सदाचार वैष्णव रहस्य को प्रचारि करि गये हैं ॥
बीच पाय सियाराम रहस्य उपासना की मन्दरीति पेखि सदाचार नये नये हैं ॥
तब ही कृपाल निज भक्ति के दृढाइबे को रामचन्द्र आपु रामानन्द जी भये हैं ॥

उत्तर - श्री जानकी रसिक शरण जी के पूर्वाचार्य श्री युगलनन्य शरण जी जब श्री सीता जी से अपनी परम्परा स्वीकार कर चुके हैं तब रामानन्द सम्प्रदाय का रामानुज सम्प्रदाय का अंग होना यह कथमपि सत्य नही हो सकता है।

श्री युगलानन्य शरण जी ने स्पष्ट रूप से श्री सीता जी और हनुमान जी से ही अपनी परम्परा मानी है।

हम आपको आज से २२० वर्ष पुराना प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं जो जयपुर कोटपुतली स्थान के रामानन्दीय मठ के पूर्वाचार्य श्री ब्रह्मदास जी द्वारा कृत है। इस ग्रन्थ का नाम राम परत्वम है। इस ग्रन्थ के आरम्भ में उन्होंने अपनी गुरु परम्परा लिखी है। यथा प्रमाण :-

सुखनिधिं गुरुं वन्दे सर्वतत्त्वार्थविन्महान्।
माधुर्यरससम्पन्नं रामचन्द्रगुणालयम् ॥
गिरिधरं गुरु वन्दे साधुमध्ये शिरोमणिः।
धनुषाङ्क भुजसम्पन्नो राममन्त्र विधारकः ॥८॥
नदीनां शाव्यकातीरे राजनग्रेप्यशोभिताम्।

शमीवन समायुक्तां श्रासनं परिकल्पितम् ॥९॥

सीतानाथ समारम्भां बहु सिद्ध समन्विताम् ।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥१०॥

सम्पूर्ण सुखों के सागर सभी तत्वों के अर्थो के महान् विज्ञाता, माधुर्य रस से भरपूर, श्री रामचन्द्र जी के दिव्य गुणों के निवास (अर्थात् जिनका हृदय प्रभु के गुण-गरणों के वर्णन के आनन्द से भरा हुआ है) सन्तों के समाज में जो शिरोमणि हैं, श्री धनुर्वाण की मुद्रा से जिनकी भुजायें अलंकृत हैं, जो श्रीराममन्त्र को धारण करने वाले हैं ऐसे श्री गिरधरशरण जी महाराज गुरुदेव की मैं वन्दना करता हूँ। राजनोता नगर में सुशोभित, तथा समीवन से सम्पन्न शाव्यका (साबी) नदी के तीर पर जिनका आसन लगा है ऐसे श्री गुरुदेव को प्रणाम है ॥९॥ श्री सीतानाथ प्रभु श्रीराम से प्रारम्भ हुई तथा बीच में बड़े-बड़े सिद्ध-सन्तों के द्वारा प्रचार की गई, हमारे श्री गुरुदेव पर्यन्त श्री गुरु-परम्परा की मैं वन्दना करता हूँ ॥१०॥

राम परत्वम पृष्ठ संख्या २ -

सुखनिधिं गुरुं वन्दे सर्वतत्त्वार्थविन्महान् ।
माधुर्यरससम्पन्नं रामचन्द्रगुणालयम् ॥७॥
गिरिधरं गुरुं वन्दे साधुमध्ये शिरोमणिः ।
धनुषाङ्कं भुजसम्पन्नो राममन्त्र विधारकः ॥८॥
नदीनां शाव्यकातीरे राजनग्रेप्यशोभिताम् ।
शमीवन समायुक्तां आसनं परिकल्पितम् ॥९॥
सीतानाथ समारम्भां बहु सिद्ध समन्विताम् ।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥१०॥

श्री सीतानाथ प्रभु श्रीराम से प्रारम्भ हुई तथा बीच में बड़े-बड़े सिद्ध-सन्तों के द्वारा प्रचार की गई, हमारे श्री गुरुदेव पर्यन्त श्री गुरु-परम्परा की मैं वन्दना करता हूँ ॥१०॥

तो जब श्री ब्रह्मदास जी ने अपनी गुरु परम्परा को पूर्व में पहले ही रख दिया है तब रामानन्द सम्प्रदाय की गुरु परम्परा के विषय में किसी को क्या भ्रम हो सकता है ? यदि दिख रहा है तो वह सब कुटिलता और द्वेष का प्रकाश मात्र है। ऐसे द्वेष से हम और आप कहां तक पहुंचेंगे प्रोफेसर साहब ! इसलिए आप जैसे लोगों को यह सोच कर इस द्वेष को समाप्त कर अपनी गुरु परम्परा के अनुसार भगवद शरणागति को प्राप्त करना चाहिए इस प्रकार किसी सत्सम्प्रदाय पर आक्षेप आपको शोभा नही देता।

प्रश्न १८

रेवासा के श्रीबालकृष्णदासजी ने सिद्धान्ततत्त्वदीपिका में लिखा है-

पूर्वज रामानुज गुरु मार्ग मन्त्र दिवाय।
भजन भाव की रीति सब दीन्हेउ गुरु गहाय॥
इससे सिद्ध हुआ कि वे रामानुज से ही परम्परा मानते हैं

उत्तर -

श्री बालकृष्णदास जी ने "नेह प्रकाश" ग्रन्थ लिखा है उसमें उन्होंने श्री किशोरी जी को ही अपनी आराध्या माना है यथा प्रमाण :-

गूढ़ वेद वेदांत को, निज सिद्धांत स्वरूप।
जयति सिया अह्लादिनी, शक्ति-शक्ति गनभूप ॥२

श्री किशोरी जी को ही अपने निज सिद्धान्त का स्वरूप वे कह रहे हैं तब यह बताने की अधिक आवश्यकता नही है कि वे किससे अपनी परम्परा मानते हैं। जिस सिद्धान्त को वे मानते हैं वह श्री रामानन्दीय गुरु परम्परा में ही मान्य हो सकती है यथा प्रमाण -

श्री जानकी जी के समान संसार में और कौन उपास्य देवता हो सकती हैं जिनके वश में स्वयं अखिल कोटि ब्रह्माण्ड नायक श्री ब्रह्म रुद्र सेवित भगवान श्री रघुवीर रहते हैं। इसलिए अनन्य व्रत धारी होकर श्री जानकी जी की चरण धूलि की सेवा करनी

चाहिए। उमा रमा सरस्वती शची आदि शक्तियां जिनकी विभूति हैं उन श्री सिया जी की जय हो जो सकल शक्तियों की स्वामिनी हैं और भगवान राम को नित्य आह्लाद देने वाली हैं।

जनक सुतासम देवता, कहौ कौन जग और ।
जाके बस रघुबीर पिय; ब्रह्म रूद्र शिरमौर ॥१४४
योग यज्ञ तप नेमब्रत, त्याग त्यागिये दूरि ।
होय अनन्य ब्रत सेइये, श्रीजानकि पद धूरि ॥१४५
हौं अल्प कृशसेव बिनु, दीन जानि करू नेहु ।
सकल सुकृत मिलि सीयपद, धूरि भूरि फल देहु ॥१४६
उमारमा सरस्वति सची, जिहिं बिभूति के रूप ।
जयति सिया अह्लादिनी, शक्ति शक्तिगण भूप ॥१४७

अब बताइए प्रोफेसर साहब :- क्या यह सिद्धान्त रामानुज सम्प्रदाय में स्वीकार्य है। अरे आपके यहां तो स्वामी लोकाचार्य जी ने तो लक्ष्मी जी को ही जीव कोटि में परिगणित किया है। इसलिए इस अनन्य रामानन्दीय सिद्धान्त के अनुसार श्री बाल अली जी श्री सीता प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय से ही अपना सम्बन्ध मानते हैं।

प्रश्न १९

श्रीरामसखा जी महियर स्थान के श्रीमहन्त श्रीरामरंगीलेशरणजी ने अपने ग्रन्थ 'श्रीसंप्रदायभास्कर' के आदि में लिखा है -

मध्वस्तु हनुमान् साक्षाच्छेषोरामानुजो यतिः।
भविष्यति कलावेव रामतत्त्वप्रवर्तकः।
रामानन्दः स्वयं रामो वैराग्यादनुसंभवः॥

उत्तर - प्रोफेसर साहब ! आप लगता है राम टहल दास द्वारा उठाए गए इन श्लोकों को बिना देखे ही छाप दिए हैं। यह श्लोक देकर तो आपने रामानुज सम्प्रदाय का रामानन्द सम्प्रदाय का स्पष्ट भेद सिद्ध किया है।
इस श्लोक में कहा है कि मध्व स्वामी हनुमान जी के अवतार हैं, रामानुज स्वामी शेषनाग के अवतार हैं और भविष्य में रामतत्व के प्रवर्तक स्वयं श्री राम ही श्री स्वामी रामानन्द स्वामी जी होंगे जो वैराग्य की प्रतिमूर्ति होंगे।

इस श्लोक में तो स्पष्ट रामोपासना के प्रवर्तक श्री रामानन्द स्वामी जी को कहा गया तब इससे तो रामानुज सम्प्रदाय का रामानन्द सम्प्रदाय का ही महान भेद प्रस्तुत हो रहा है। इसके अलावा भी हम आपको उसी स्थान के संस्थापक स्वामी राम सखा जी के ही कुछ वाक्य दिखाते हैं यथा प्रमाण -

श्री रामसखे कृत अखिल रामायण षट मुकर षटकवित्त से -

कहिये अनंत जो अनंत ही चरित जाको,
सत कोटि ग्रंथन वाल्मीकि नै बखान्यो हों।
कहियै अवतारी जो अवतार को नियंता होई,
परसुराम दंड दीन्हो सौ तो जग जान्यो हों॥
कहियै वर रूप जाको चोरे जतीन चित,
दंडक वन मुनि मोहे काम उर ठान्यों हों।
राम सखे कहिये सर्व ऊपर है नाम जाको,
संकर तप ताहि याते राम मान्यों हों॥१॥

बाललीला रघुवंसिन सो अवधि वीथिन,
व्याहलीला जानकी सौ मिथिलापुर भारी है।
रामलीला कोटिन सखिन सों प्रमोदन,
बन लीला दण्डक में लखन संग धारी है।
रनलीला अद्भुत अति लंका में रावन सों,
रामलीला अयोध्या पुनि आई के सम्हारी है।

लीलायें अनन्त राम सखे नृत्य राघोजी की,
पावै को अंत बालमीक गतिमति हारी है ॥२॥

ताको रिछ बन्दर है ब्रह्मा रवि संकरह,
निसदिन रिझावत कौतुक वपुधारी हैं।
दीन्हो तानै दंडतार परसुरामहूं को गैन को
रावन आदि के जे मारिरिपुचारी हैं।
पठये गोलोक तिहि अवधि जीव चीटी ल्यै
ऐसी को प्रतापी अति लीन्हा सब निहारी है।
करिके विचार कहे राम सखे चित्त माँहि
यातै सकल अवतारन के राम अवतारी हैं ॥३॥

इसलिए रामरंगीलेशरण जी के परम आचार्य श्री रामसखे जी श्री राम को सकल अवतारों के अवतारी स्वीकार कर रहे हैं। यद्यपि वे माध्व सम्प्रदाय के आचार्य थे लेकिन अयोध्या में आकर जब अनन्य रामानन्दीय रसिकों का जब उन्होंने संग किया तब श्री रघुनन्दन रामभद्र के ऐश्वर्य और माधुर्य दोनों का सम्यक साक्षात्कार हुआ और साक्षात अगस्त्य जी से उन्हें राम मंत्र की दीक्षा प्राप्त हुई। इसलिए आपका यह कहना कि उन्होंने रामानुज से रामानन्द सम्प्रदाय का उद्भव माना यह पूर्ण निरर्थक है।

प्रश्न २०
इसी प्रकार गोकुल ब्रह्माण्ड घाट के महन्त श्रीभगवान् दासजी के 'श्रीरामचरणचिह्नावली' ग्रन्थ में तथा काशीकमच्छास्थानाधिपति श्रीहरिहरप्रसादजी के 'तुलसीत्तत्त्वभास्कर' ग्रन्थ में दोनों सम्प्रदायों की एकता के दर्शन होते हैं।

उत्तर - श्री रामचरणचिन्हावली आदि ग्रंथों की जो चर्चा की गई है तो उसमें क्या लिखा है यह तो मुझे नही पता और न ही आक्षेपकर्ता ने उसमें क्या लिखा है ये लिखा है इसलिए इसका उत्तर देना न तो आवश्यक है और न ही तर्कपूर्ण।

रही बात तुलसीतत्त्व भास्कर की जिसके लेखक श्री हरिहरप्रसाद जी हैं उन्होंने क्या लिखा है "तुलसीतत्व भास्कर" में इसे हम प्रस्तुत कर रहे हैं -

श्लोक-
वज्राङ्गं वज्र दंष्ट्रञ्ज्वल दव, दहनं कोटि सूर्य प्रकाशं।
रुद्रं ब्रह्मादि सेव्यं दशमुख, भयदं काञ्चनाभं कपीशम्॥
पिङ्गाक्षं पीत वस्त्रं पवनसम, जवं रामदूतं प्रसन्नं।
लङ्का बङ्कः प्रदन्तम् कपिकुलतिलकं वातजातं नमामि॥१॥

सीतापतेः शरं नत्वा शार्ङ्गञ्चापि शरासनम्।
कुर्वे वैष्णव तुष्टार्थं तुलसी तत्त्व भास्करम्॥

इन श्लोकों में उन्होंने स्पष्ट रूप से श्री सीतापति भगवान के धनुष और बाण को प्रणाम किया है। यही धनुष और बाण रामोपसक अपने भुजा मूल में धारण करते हैं।

इससे ही स्पष्ट है कि वे रामानन्दीय गुरु परम्परा को किससे मानते हैं।

पाठकों के लिए बता दूं कि ये वही पण्डित हरिहरप्रसाद जी हैं जिन्होंने रामचरितमानस की टीका भी लिखी है और ये काशी राजघराने के वंशोद्भव थे। आप श्री काशी नरेश के फुफेरे भाई थे।

प्रोफेसर साहब ! अपने रामटहल दास के इस आक्षेप को तो copy paste कर दिया लेकिन यह तो बता देते कि हरिहर प्रसाद जी ने यह ग्रन्थ लिखा क्यों ? हम जानते हैं आप नहीं बता सकेंगे लेकिन हम आपको और सबको यह बताते हैं कि यह ग्रंथ उन्होंने क्यों लिखा -

इस ग्रन्थ "तुलसी तत्त्व भास्कर" के प्राक्कथन में ही लिखा है -

सिद्धों की खान काशी नगरी में एक विद्वान सन्यासी जी के यहां श्री हरिहरप्रसाद जी का एक शिष्य अध्ययन करने जाया करता था। एक दिन की बात है सन्यासी जी ने पढ़ाते पढ़ाते उस शिष्य के गले में कंठी धारण किए हुए देखकर एकाएक यह कह दिया कि "गले में कण्ठी सदैव नही धारण करना चाहिए"। उस समय उस शिष्य ने सन्यासी जी से तो कुछ नहीं कहा किन्तु स्थान पर आकर गुरुदेव से सब कह सुनाया। इस पर गुरुजी ने यह कहा कि बेटा ! सन्यासी जी से प्रार्थना करना कि "स्वामी जी ! सदैव कण्ठी न धारण करने का कोई आर्ष प्रमाण बतलाने की कृपा कीजिए ताकि आपकी आज्ञा का पालन कर सकूं।

शिष्य ने अपने गुरुदेव की आज्ञा शिरोधार्य की और आकर सन्यासी जी से यही कहा। इस पर सन्यासी जी ने स्वरचित (कल्पित) पांच सात श्लोक उक्त विषय पर विद्यार्थी को सुनाये। आपने अपने इन श्लोकों को ग्रन्थों से उधृत बतलाकर अपने सिद्धान्त की पुष्टि की। विद्यार्थी ने इन श्लोकों को अपनी पुस्तक पर लिख लिया। स्थान में आकर अपने गुरू श्रीहरिहरप्रसाद जी के सम्मुख उन श्लोकों को रक्खा।

इस पर श्रीहरिहरप्रसादजी को बड़ा खेद हुआ और विचारने लगे कि ये तो झगड़ा सदैव ही होता रहेगा अतः इसका निपटारा ही करना अपना परम कर्त्तव्य है'। ऐसा सोचकर उन्होंने काशी नरेश द्वारा विद्वानों की एक विराट सभा का आयोजन किया। इसमें सभी सम्प्रदायों के विद्वानों को आमंत्रित किया गया। सभा हुई और उसमें उक्त प्रस्ताव (कंठी तिलक वैष्णव धर्म वाला) रक्खा गया।

इस सभा के पूर्व श्रीहरिहरप्रसाद जी ने पुस्तकालयों से ग्रन्थ एकत्रित करके अपने सिद्धान्तों की पुष्टि के लिए प्रमाणों में चिह्न लगा लिये थे। साथ ही सन्यासी जी के बतलाये ग्रन्थों को भी देख लिया था कि कही सन्यासीजी के कहे अनुसार कोई प्रमाण तो नही है किंतु जब कोई प्रमाण ऐसा न प्राप्त हो सका तो स्वामीजी के श्लोकों को कल्पित समझकर इस झगड़े की इति श्री के लिये इस सभा का आयोजन किया।

जब सभा में यह प्रस्ताव रक्खा गया तो ग्रन्थ खोले गये। सभी विद्वानों ने श्रीहरिहरप्रसादजी के प्रमाणों को स्वीकार किया। क्योंकि जिन ग्रन्थों में सदैव धारण करने के प्रमाण प्राप्त हुये उनमें 'सदैव कंठी धारण न की जाय' ऐसा कोई प्रमाण उपलब्ध न हुआ फलतः श्रीसन्यासी जी को उक्त सभा में लज्ञित होना पड़ा।

इस ग्रंथ में हरिहरप्रसाद जी ने काशी के तत्कालीन 50 से भी ऊपर प्रकाण्ड विद्वानों की सम्मति लिखवाई है जिसमें सभी सम्प्रदाय के विद्वान थे।

अब बताइए प्रोफेसर साहब - नित्य कंठी धारण करने का नियम कौनसे सम्प्रदाय में है ? रामानुज में या रामानन्द में ?

सीता प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय ही वह अपनी परम्परा मानते हैं।

इसलिए काशी के इन महान पण्डित के लिए ऐसी बातें कहना आपको शोभा नही देता है।

प्रश्न २१ -
भवानीपुर, मुंगेर के महन्त श्रीपरमहंस पं. श्रीसन्तदासजी ने अपने 'परमसाकेतधाम' ग्रन्थ में इस तरह गुरुपरम्परा लिखी है -

श्रीरामानुजवंशके गुणनिधिः सच्छास्त्रविद्यायुतः
श्रीमद्राघवदासस्वामिनिपुणो भक्तौ रतः पापहा।

उत्तर - इस ग्रन्थ के उपाधि "परमसाकेतधाम" नाम से यही सिद्ध होता है कि ग्रन्थकार को साकेत धाम ही परम धाम रूप में स्वीकार्य है। तब रामानुज सम्प्रदाय से उनका सम्बन्ध कैसे हो सकता है। वस्तुतः "रामानुज" शब्द न होके "रामानुक" था। उसे पण्डित राम टहल दास ने परिवर्तित किया। साकेत धाम परधाम के रूप में रामानुज सम्प्रदाय में मान्य ही नही है इसलिए रामानुज शब्द वहां समीचीन नही बैठता।

प्रश्न २१ -
भवानीपुर, मुंगेर के महन्त श्रीपरमहंस पं. श्रीसन्तदासजी ने अपने 'परमसाकेतधाम' ग्रन्थ में इस तरह गुरुपरम्परा लिखी है -

श्रीरामानुजवंशके गुणनिधिः सच्छास्त्रविद्यायुतः
श्रीमद्राघवदासस्वामिनिपुणो भक्तौ रतः पापहा।

उत्तर - इस ग्रन्थ के उपाधि "परमसाकेतधाम" नाम से यही सिद्ध होता है कि ग्रन्थकार को साकेत धाम ही परम धाम रूप में स्वीकार्य है। तब रामानुज सम्प्रदाय से उनका सम्बन्ध कैसे हो सकता है। वस्तुतः "रामानुज" शब्द न होके "रामानुक" था। उसे पण्डित राम टहल दास ने परिवर्तित किया। साकेत धाम परधाम के रूप में रामानुज सम्प्रदाय में मान्य ही नही है इसलिए रामानुज शब्द वहां समीचीन नही बैठता।

श्री सम्प्रदाय जानकी प्रवर्तित ही है इसका प्रमाण हम एक अत्यन्त प्राचीन प्रमाण से दे रहे हैं -
श्री स्वामी रामानन्दाचार्य के समकालीन एक मौलाना 'रसदुद्दीन' ने मुस्लिम फकीरों की जीवनी लिखी है उसमें अन्य किसी भी हिन्दू साधू की जीवनी न लिखकर उस पुस्तक "तजकीर-तुल-फुकरा" में केवल श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज का स्मरण किया है जिसे स्वयं गीताप्रेस ने सन्त अंक में श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी के अलोक में छापा है और डॉ. बलदेव उपाध्याय ने अपनी पुस्तक "संस्कृत वांग्मय का बृहद इतिहास" में भी छापा है यथा प्रमाण -

काशी में पञ्चगङ्गाघाट पर एक प्रसिद्ध महात्मा रहते हैं। तेजपुञ्ज और योगेश्वर हैं। वैष्णवों के सर्वमान्य आचार्य हैं। सदाचार और ब्रह्मनिष्ठत्व के स्वरूप ही हैं। परमात्मतत्त्व रहस्य के पूर्णज्ञाता हैं। सच्चे भगवत् प्रेमियों एवं ब्रह्मविदों के समाज में उत्कृष्ट प्रभाव रखते हैं। धर्माधिकार में वे हिन्दुओं के धर्मकर्म के सम्राट् है। केवल ब्रह्मवेला में अपनी पुनीत गुफा से गङ्गास्नान के लिए बाहर निकलते हैं। उन पवित्र आत्मा को रामानन्द कहते हैं। उनके शिष्यों की संख्या पाँच सौ से अधिक है। उस शिष्यसमूह में द्वादश शिष्य गुरु के विशेष कृपापात्र हैं कबीर, पीपा, रैदास आदि। भागवतों के समुदाय का नाम विरागी है। जो लोक-परलोक की इच्छाओं का त्याग करता है, उसे ब्राह्मणों की भाषा में विरागी कहते हैं। कहते हैं कि इस सम्प्रदाय की

प्रवर्तिका (ऋषि) जगजननी (श्री) सीता जी हैं। उन्होंने प्रथमतः अपने सविशेष सेवक पार्षदरूप (श्री) हनुमान जी को उपदेश किया और उन ऋषि (आचार्य) के द्वारा संसार में इस रहस्य (मन्त्र) का प्रकाश हुआ। इस कारण इस सम्प्रदाय का नाम 'श्रीसम्प्रदाय' है और उनके मुख्य मन्त्र को रामतारक कहते हैं। उस पवित्रमंत्र को गुरु शिष्य के कान में दीक्षा देते हैं और ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक लाम व मीम के आकार का ललाट तथा अन्य ग्यारह स्थानों पर लगाते हैं। तुलसी का हीरा जनेऊ में गूंथ कर शिष्य के गले में पहनाते हैं। उनकी जिह्वा जप में और मन सच्चे प्रियतम के दर्शनानुसन्धान में रहा करता है। पूर्णतया भगवान् में ही इस सम्प्रदाय की रति है। अधिकांश संत आत्मारागी अथवा परमहंसी जीवन निर्वाह करते हैं।

**संस्कृत वांग्मय का बृहत् इतिहास (वेदांत खंड, पृष्ठ २४७-२४८)**

इसका हिन्दी रूपान्तर कल्याण पत्रिका, गीताप्रेस, गोरखपुर के संत अंक में निम्न प्रकार से प्रकाशित है-

काशी में पञ्चगङ्गाघाट पर एक प्रसिद्ध महात्मा रहते हैं। तेजपुञ्ज और योगेश्वर हैं। वैष्णवों के सर्वमान्य आचार्य हैं। सदाचार और ब्रह्मनिष्ठत्व के स्वरूप ही हैं। परमात्मतत्त्व रहस्य के पूर्णज्ञाता हैं। सच्चे भगवत् प्रेमियों एवं ब्रह्मविदों के समाज में उत्कृष्ट प्रभाव रखते हैं। धर्माधिकार में वे हिन्दुओं के धर्मकर्म के सम्राट् हैं। केवल ब्रह्मवेला में अपनी पुनीत गुफा से गङ्गास्नान के लिए बाहर निकलते हैं। उन पवित्र आत्मा को रामानन्द कहते हैं। उनके शिष्यों की संख्या पाँच सौ से अधिक है। उस शिष्यसमूह में द्वादश शिष्य गुरु के विशेष कृपापात्र हैं - कबीर, पीपा, रैदास आदि। भागवतों के समुदाय का नाम विरागी है। जो लोक-परलोक की इच्छाओं का त्याग करता है, उसे ब्राह्मणों की भाषा में विरागी कहते हैं। कहते हैं कि इस सम्प्रदाय की प्रवर्तिका (ऋषि) जगज्जननी (श्री)

२४८ वेदान्त-खण्ड

सीता जी हैं। उन्होंने प्रथमतः अपने सविशेष सेवक पार्षदरूप (श्री) हनुमान् जी को उपदेश किया और उन ऋषि (आचार्य) के द्वारा संसार में इस रहस्य (मन्त्र) का प्रकाश हुआ। इस कारण इस सम्प्रदाय का नाम **'श्रीसम्प्रदाय'** है और उनके मुख्य मन्त्र को रामतारक कहते हैं। उस पवित्रमंत्र को गुरु शिष्य के कान में दीक्षा देते हैं और ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक लाम व मीम के आकार का ललाट तथा अन्य ग्यारह स्थानों पर लगाते हैं। तुलसी का हीरा जनेऊ में गूँथ कर शिष्य के गले में पहनाते हैं। उनकी जिह्वा जप में और मन सच्चे प्रियतम के दर्शनानुसन्धान में रहा करता है। पूर्णतया भगवान् में ही इस सम्प्रदाय की रति है। अधिकांश संत आत्मारागी अथवा परमहंसी जीवन निर्वाह करते हैं।

तो जब श्री रामानन्द स्वामी जी के समकालीन वह मौलाना रसदुद्दीन यह तथ्य जान गया कि यह सम्प्रदाय श्री जानकी प्रवर्तित सम्प्रदाय है तब आप क्या उस मौलाना से

भी नीचे बौद्धिक स्तर के हैं जो आप या आपके जैसे अभेदवादी योद्धा इस तथ्य को स्वीकार नही कर पा रहे हैं।

मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रहा हूं यह द्वेष त्याग कर अपनी परम्परा के अनुसार भगवान की सेवा करिए और हमें भी करने दीजिए। वस्तुतः इन सब से भक्ति में बाधा आती है और सनातन वैदिक हिन्दू धर्म का ही ह्रास होता है। इसलिए उचित यही है कि आप हमारी परम्परा के विश्लेषक न बनकर खुद की स्थिति का आत्मचिन्तन करें। इसी में सबकी भलाई है। इसी में सबका कल्याण है।

प्रश्न २२ -
दरभङ्गा में नरघोधी स्थान के महन्त श्रीरामलोचनदासजी महाराज ने अपने 'वैष्णवाश्रमसिद्धान्तविवेक' ग्रन्थ में लिखा है-

पाखण्डसागरमहाबड़वामुखाग्निः श्रीरङ्गराजचरणाम्बुजमूलदासः।
श्रीविष्णुलोकमणिमण्डपमार्गदायी रामानुजो विजयते यतिराजराजः॥

शेषःस्वयंकलौ श्रीवैष्णवसिद्धान्तोद्धारणार्थं श्रीमद्रामानुजाचार्य- रूपेणावतीर्णः,
तदग्रेऽप्येवं तदन्वये अत एवावशिष्टसर्ववर्णाश्रमधर्मश्रेष्ठानन्य
श्रीवैष्णवधर्मसंस्थापनार्थं श्रीरामानन्दो भूत्वेति।'

इसलिए श्री रामानन्द स्वामी जी रामानुज सम्प्रदाय से ही थे यह सिद्ध हुआ।

उत्तर - प्रोफेसर साहब ! यह तो आपको और सभी को विदित है कि किस प्रकार रामानन्द सम्प्रदाय में पूर्व समय में कुछ संकर प्रवेश हुए थे और उनके प्रभाव से कुछ अन्य लोग जो साम्प्रदायिक रहस्यों से अनभिज्ञ थे उन्हें भी भ्रम हो गया और उसी भ्रम का एक नमूना ऊपर के श्लोक में दिखता है।

यहां पर लेखक ने कही भी श्री रामानन्द स्वामी जी को रामानुज सम्प्रदाय का अनुयायी नही कहा है - उक्त श्लोकों में पहले रामानुज स्वामी की वन्दना की गई है।

उसके बाद कहा है "श्री वैष्णव सिद्धान्त का उद्धार करने हेतु स्वयं शेष ने रामानुज स्वामी रूप में अवतार लिया और उन्ही के अन्वय से अर्थात विशिष्टाद्वैत के अन्वय से श्री वैष्णव धर्म अर्थात श्री सम्प्रदाय की पुनः: संस्थापना श्री रामानन्द स्वामी जी ने की।

इसमें "तदन्वये" शब्द गुरु परम्परा की एकता का सूचक न होकर विशिष्टाद्वैत के साम्य का परिचायक है।

इसलिए इन श्लोकों से भी यह कही सिद्ध नही हुआ कि रामानुज सम्प्रदाय का ही अंग रामानन्द सम्प्रदाय है।

अपने वक्तव्य की सम्पुष्टि के लिए मैं आपको एक और प्राचीन प्रमाण दे रहा हूँ -

रामानंद धिन राम, कृष्ण जीवानंद राजै।
विष्णुस्याम नारद माधवा बुधा निराजै॥
चक्रव्यूह सिनकादि निमि जिव तारण अवतार हैं।
बानी चार प्रकार मुख अनुभव एक प्रपार है।

~सर्वेश्वर भक्तमाल पद २३२, श्रीघालबालजी सं० १८०९ (१७५२ ई०)

इसमें चार सम्प्रदाय में श्री रामानन्द, निम्बार्क, विष्णुस्वामी और मध्वाचार्य जी को एक साथ चार सम्प्रदाय के आचार्य रूप में वन्दना की गयी है।

पुष्टि सम्प्रदाय अर्थात वल्लभ सम्प्रदाय के सन्त "हरिराय गोस्वामी" ने स्वरचित ग्रन्थ "दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता" में पृष्ठ २५६ में गोस्वामी तुलसीदास जी को "रामानन्दीन के सेवक" इस उपाधि से परिगणित किया है। यह ग्रन्थ १६७३ ईस्वी का गोस्वामी हरिराय द्वारा लिखा हुआ है इसका प्रमाण हम दे रहे हैं -

१९५३ ईस्वी में इसका प्रथम संस्करण छपा था। इसके प्रकाशक पण्डित मोतीदास जी चेतनदास जी थे। प्रकाशक - कपीर प्रेस, बड़ौदा

यथा प्रमाण -

> तुलसीदासजी तो रामानंदीन के सेवक हते। सो नंददा
> हू कों रामानंदीन कौ सेवक करवायो। उन नंददासकों लौकि
> विषय में प्रीति बोहोत हती। जो कहूँ भवैया नांचे तो तहां जा
> कैं ठाढ़े रहें, सुनवे लगें। सो तुलसीदासजी नन्ददास कों बहो
> समुझावें जो-जहां तहां तू मति बेठ्यौ करे। सो वे नन्ददा
> मानते नाहीं।

इसलिए आज से ४५० वर्ष पहले भी यह प्रसिद्ध था कि रामानन्द सम्प्रदाय अलग है और रामानुज सम्प्रदाय अलग है अथवा गोस्वामी हरिराय गोस्वामी तुलसीदास जी को "रामानन्दी" कहकर क्यों सम्बोधित करते ? यदि आपके कथनानुसार रामानुज और रामानन्द सम्प्रदाय एक ही होता तब तो गोस्वामी जी को "रामानुज अनुयायी" कहा गया होता !

प्रश्न २३

श्रीशेषाचलस्थश्रीहाथीरामजीसिंहासनासीन श्रीमहान्त श्रीप्रयागदासजी ने 'सिद्धान्तपञ्चाङ्ग' में श्रीरामानुजाचार्यजी की इस तरह स्तुति की है-

विशदोर्ध्वपुण्ड्रविलसन्मुखाम्बुजं ललितोपवीतकलितोरुवक्षसम्।
करपद्मवज्रकलितत्रिदण्डकं कलये यतीन्द्रकमनीयविग्रहम्॥

उत्तर - प्रोफेसर साहब ! आप प्रमाण देने से पहले थोड़ा शोध तो करिए ! जब उत्तर भारत के साम्प्रदायिक रहस्यों से अनभिज्ञ रामानन्दीय वैष्णव रामानुज और रामानन्द में भ्रमवशात अभेद मान लिए तब दक्षिण भारत की वह गद्दी जिस पर प्रत्यक्ष रूप से रामानुज सम्प्रदाय की छाप है। केवल श्री हाथीराम बाबा जो नागौर

राजस्थान से चलकर वेंकटेश स्वामी के स्थान तिरुपति में पहुंचे थे जब प्रभु ने हाथी रूप में आकर उनकी रक्षा की थी इसलिए उनका नाम हाथीराम बाबाजी पड़ा केवल इस सम्बन्ध से वह स्थान नाम के लिए रामानन्दी रह गया सिद्धान्त और व्यवहार से तो पूर्ण रूप से रामानुजीय है। तब उस पीठ के महान्त जी की उक्ति को इस विषय में प्रमाण कैसे माना जा सकता है ? और उस दक्षिणात्य पीठ में स्वामी रामानुज की वन्दना स्वाभाविक है लेकिन इसके पश्चात भी इस श्लोक से यह कहां प्रकट हो रहा है कि स्वामी रामानुज की ही परम्परा में रामानन्द स्वामी जी हैं ।

प्रश्न २४

श्रीअवधशृङ्गारभवन के पं. श्रीरामनारायणदासजी के 'श्रीभगवत्पूजनक्रम' नामक ग्रन्थ में श्रीरामानुजीयगुरुपरम्परा का श्लोक विद्यमान है।

श्रीअवध बड़ी जगह के श्रीमान् के स्वप्रकाशित 'दुर्जनमुखभङ्गचपेटिका' में धन्यवाद इस तरह है -

'श्रीमद्बोधायनादिमहर्षिभक्तिसारादिदिव्यसूरिनाथयामुनयतिवरादिपूर्वाचार्यपरिगृहीतश्रुत्यादिसिद्धविशिष्टाद्वैतसिद्धान्तनिष्ठश्रीरामानन्दीयश्रीवैष्णवप्रवरश्रीजानकीचरणकमलमिलिन्दायमानश्रीमद्रामप्रसादगुरुचरणपरम्पराप्राप्तश्रीगोपालप्रसादगुरुवर्यकृपादत्तश्रीकोदण्डपाणिपदपङ्कजचञ्चरीकायमाणश्रीमदयोध्याबृहत्स्थानाधिपमहन्तश्रीमद्रामनोहरप्रसादशुभ-समाह्वयमहानुभावेभ्यः कोटिशः धन्यवादः।'

उत्तर - बोधायन दिव्यसूरि नाथ यामुन यतिवर रामानुज स्वामी आदि पूर्वाचार्य की यह परम्परा है इस वक्तव्य में "बोधायन" महर्षि तो रामानन्द सम्प्रदाय के पूर्वाचार्य हैं। तो यदि

"श्रीमद्बोधायनादिमहर्षिभक्तिसारादिदिव्यसूरिनाथयामुनयतिवरादिपूर्वाचार्यपरिगृहीतश्रुत्यादिसिद्धविशिष्टाद्वैतसिद्धान्तनिष्ठश्रीरामानन्दीयपरम्परा" इस वाक्य से इसे गुरु परम्परा मान लें तब तो समस्त रामानुज सम्प्रदाय रामानन्द सम्प्रदाय का ही अंग घोषित हो जायेगा क्योंकि इसमें सर्वप्रथम बोधायन महर्षि का नाम आया है।

और वैसे भी पण्डित राम मनोहर प्रसाद जी को हनुमान गढ़ी शास्त्रार्थ में स्वामी भगवदाचार्य जी पूर्व में ही पराजित कर चुके हैं तब इस आक्षेप का कोई प्रयोजन ही नही !

रही बात पण्डित रामनारायणदासजी की तो ये महानुभाव भी उन्ही मुख्य ५ सम्प्रदाय संकरों में हैं जिनका नाम स्वामी भगवदाचार्य जी ने अपनी आत्मकथा में लिया है। इसे हमने "उज्जैन शास्त्रार्थ प्रकरण" वाली video में उद्धृत किया था। ऐसे में इनका भी कोई वचन रामानन्द सम्प्रदाय के विषय में संदेहास्पद ही होगा इसलिए इसे प्रमाण रूप में स्वीकार कथमपि स्वीकार नही किया जा सकता है।

प्रश्न २५

एवमेव अमृतसर दुर्शानीतालाब श्रीरघुनाथमन्दिर के महन्त श्रीसरयूदासजी का 'चतुर्दशरहस्य', 'हैदराबाद के श्रीमहान्तवद्रीदासजी के शिष्य नागा भगवानदासजी की 'ज्ञानरसिकावली' एवम् वृन्दावन के दिगम्बर अखाड़े के श्रीमहान्त श्रीमुरलीदासजी का ग्रन्थ 'गुरुपरम्परा' भी दोनों सम्प्रदायों की एकता में प्रमाण है।

उत्तर - आप हमको प्राकृत मनुष्यों के द्वारा लिखे गए श्लोक का प्रमाण दे रहे हैं और हम आपको अप्राकृत दिव्य आर्ष ग्रंथो का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं -

राम परत्वम् ग्रन्थ के प्रणेता श्री ब्रह्मदास जी महाशम्भु संहिता का प्रमाण देकर बताते हैं -

हनुमत्परमाचार्यो विनाचार्यो न कोऽपि च।
इति पद्धति निर्णीतं पूर्वोक्तं च मयोदितम्॥
राजमार्गमिमं विद्धि रामोक्तं जानकीकृतम्।
यदृते चान्य मार्गास्तु चौराणां वीथिका यथा॥
आद्याचार्य हनूमतं त्यक्त्वा चान्यमुपासते।
क्लिश्यन्ति चैव ते मुग्धाः मूलहा पल्लवाश्रिताः॥
श्री जानकी सम्प्रदायं राम रास समन्वितम्।
ऋते कोऽपि न यास्यन्ति वाञ्छितं फलमेव वा॥

परमाचार्य श्री हनुमान जी के बिना रामभक्ति के अन्य कोई आचार्य (अर्थात मूल आचार्य) नही हो सकते। यह बात सैद्धांतिक पद्धतिपूर्वक मैने पूर्व स्पष्ट शब्दों में कही है। श्री राम जी द्वारा कहा हुआ और श्री जानकी जी द्वारा प्रवर्तित यह राजमार्ग अर्थात श्री सम्प्रदाय का मार्ग है। इसके बिना अन्य सभी मार्ग चोरों को अंधेरे में भटकाने वाली गलियों के समान है। श्री राम मंत्र के आद्याचार्य श्री हनुमान जी को त्याग कर जो अन्य मार्गों में भटकते हैं वे मूल को काट कर पत्तों का आश्रय लेने वाले मूर्खों की भांति केवल कष्ट ही कष्ट भोगते हैं।

हनुमत्परमाचार्यो विनाचार्यो न कोऽपि च।
इति पद्धति निर्णीतं पूर्वोक्तं च मयोदितम् ।।७०२।।
राजमार्गमिमं विद्धि रामोक्तं जानकीकृतम्।
यदृते चान्य मार्गास्तु चौराणां वीथिका यथा ।।७१९।।
आद्याचार्यं हनूमतं त्यक्त्वा चान्यमुपासते।
क्लिश्यन्ति चैव ते मुग्धाः मूलहा पल्लवाश्रिताः ।।७२०।।
श्री जानकी सम्प्रदायं राम रास समन्वितम्।
ऋते कोऽपि न यास्यन्ति वाञ्छितं फलमेव वा ।।७२२।।

आज जो कुछ लोग सम्प्रदाय में रहकर ही सम्प्रदाय संकर हो गए हैं उन संकरों के लिए ही यह भगवान शिव का निर्देश है कि मूल को छोड़कर पत्तों का आश्रय लेना मूर्खता ही है अन्य कुछ नही इसलिए सम्प्रदाय निष्ठ होकर रामोपासना को पूर्वाचार्य रीति से करें अथवा दुर्गति निश्चित है।

महाशम्भु संहिता में जिस श्री सम्प्रदाय रूपी राजमार्ग की बात कही है उसी राजमार्ग का उद्धरण श्री हनुमान जी महाराज द्वारा अगस्त्य महर्षि को अर्थ पंचक ज्ञान में देते हैं यथा प्रमाण :-

हनुमत संहिता अध्याय ६ से

प्रविश्य राजमार्गेण सप्तावरणसंयुतम् ।
नानारत्नमयं दिव्यं श्रीरामभवनं शुभम् ॥

अर्थात इस श्री सम्प्रदाय रूपी राजमार्ग में प्रवेश करके वह सप्तावरणों से आवृत नाना दिव्य रत्नों से युक्त रामभवन अर्थात साकेत में पहुंचता है।

यह हमारे दिव्य वैदिक सम्प्रदाय का प्रमाण है जो आर्ष ग्रन्थों से प्रमाणित है।

हमारा सिद्धान्त जो हनुमान जी ने अर्थपंचक उपदेश में कहा है उसे देखिए यथा प्रमाण

हनुमत संहिता ६ अध्याय श्लोक ६

ब्रह्मविष्णुमहेशानां कारणं सर्वव्यापकः ।
मूलं तुह्यवताराणां धर्मसंस्थापकः परः ॥

भगवान श्री राम ब्रह्मा विष्णु महेश के कारण हैं। सर्वव्यापक हैं। सभी अवतारों के अवतारी हैं। धर्म के संस्थापक हैं। श्री राम ही परम तत्त्व हैं।

यह उपदेश रामानन्द सम्प्रदाय का रामानुज सम्प्रदाय से सिद्धान्त दृष्टया महान भेद उपस्थित करता है।

आपके यहां अर्थ पंचक का ज्ञान प्राकृत आचार्यो ने दिया है और हमारे यहां तो अर्थ पंचक का ज्ञान सीधे श्री हनुमान जी ही दे रहे हैं तब हनुमान जी की बात को प्रमाण मानें या आपकी ?

अगर आपके अनुसार सभी रामानन्दी रामानुज सम्प्रदाय का अंग हैं तब तो भगवान शंकर भी रामोपासक हैं तब वे भी आपके अंग हैं लेकिन आप लोग तो उन्हें अपने आचार्य जैसा सम्मान नही देते हैं आपके मठों में तो शिवलिंग स्थापित नही किए

जाते हैं। तब आपके खुद की बातों में ही महान विरोधाभास खड़ा हो जाता है इसलिए परम सत्य यही है रामोपसक श्री वैष्णव समाज का नारायणोपासक श्री सम्प्रदाय से केवल शेषी शेष सम्बन्ध हो सकता है शेष शेषी सम्बन्ध नहीं। श्री राम के अवतार नारायण हैं। श्री राम के सेवक लक्ष्मण जी हैं। इस दृष्टि से भी हमारे इष्ट श्री राम शेषी हैं श्री नारायण शेष हैं। और हमारे रामानन्द महाप्रभु जी स्वामी हैं और रामानुजाचार्य जी सेवक हैं। इसलिए यदि यह सम्बन्ध आपको स्वीकार्य हो तो बहुत अच्छा अथवा अन्य कोई सम्बन्ध हमारा आपसे नहीं है।

प्रश्न २६
दिगम्बरअनी के श्रीमहन्त रामदुलारेदासजी ने 'उज्जैनकुम्भसमाचार' नामक एक प्रकाशित विज्ञापन में इस तरह विज्ञापना प्रस्तुत की है-

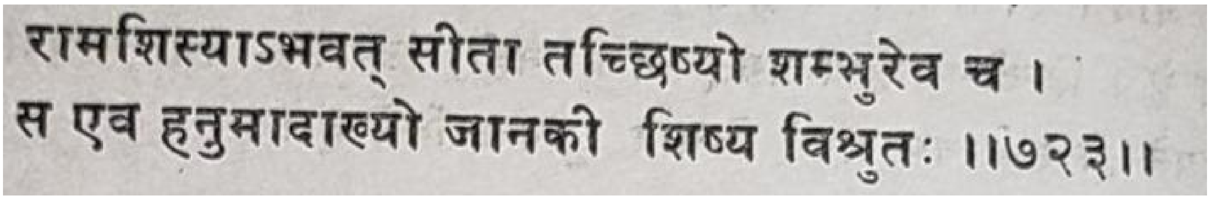
'प्राचीन सिद्धान्तीयसम्बन्ध' विरोधवशात् किसी व्यक्तिगत के छुड़ाने से छूट नही सकता। अतः श्री अयोध्या बड़ा स्थान, राजगोपाल प्रभृति स्थानों के महन्त सन्तों के हस्ताक्षरीपत्रोक्तसिद्धान्त हम लोगों को भी मन्तव्य है। अर्थात् गलता आदि ३६ द्वारा गादीयों का श्रीरामानुजीयान्तर्गत श्रीरामानन्द-स्वामीजी की गुरुपरम्परा तथा श्रीरामानन्दस्वामीजीकृत श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर एवम् श्रीनाभाजीकृत भक्तमाल और धामक्षेत्रादिस्थ शिष्टव्यवहार अस्मादिकों के पूर्वज जिनको आचार्य मानते आये हैं उन्ही को हम लोग भी मानते हैं और अन्दर सदा मानेंगे।

उत्तर - प्रोफेसर साहब ! किसी भूल में मत रहिएगा कि इस सम्प्रदाय को स्वतन्त्र किसी व्यक्तिगत ने कराया है। इस सम्प्रदाय की कुल देवी श्री किशोरी जी ने इस सम्प्रदाय की रक्षा की है। उनकी शक्ति ने ही प्रविष्ट होकर स्वामी भगवदाचार्य जी से इस सम्प्रदाय की सेवा करवाई। वही शक्ति हम में प्रविष्ट होकर आज यह सेवा करा रही है। "उर प्रेरक रघुवंश विभूषण" सभी के हृदय में सत्कार्यो की प्रेरणा देने वाले श्री भगवान हैं इसलिए यह कार्य भी भगवान की शक्ति ही कर रही है इसमें हम जैसे अल्पमति लोगों का क्या सामर्थ्य है ?

खैर ये लोग जिनका आपने नाम लिया ये तो रामानुज सम्प्रदाय का अंग श्री रामानन्द सम्प्रदाय को मान रहे थे लेकिन इसके विपरीत महत्वपूर्ण यह है कि अति प्राचीन आर्ष ग्रन्थ में हमारे सम्प्रदाय के आचार्य क्या मान रहे थे ? उसका हम आपको दिग्दर्शन कराते हैं -

राम परत्वम ग्रन्थ में ही स्वामी ब्रह्मदास जी महाराज सदाशिव संहिता का प्रमाण देकर कहते हैं -

रामशिष्याऽभवत् सीता तच्छिष्यो शम्भुरेव च।
स एव हनुमदाख्यो जानकी शिष्य विश्रुतः॥


रामशिस्याऽभवत् सीता तच्छिष्यो शम्भुरेव च ।
स एव हनुमादाख्यो जानकी शिष्य विश्रुतः ।।७२३।।

श्री सीता जी ही श्री राम जी की शिष्या बनी तथा श्री राम के द्वारा तारक श्रीरामषडक्षर मंत्र प्राप्त कर उन्होंने श्री हनुमान जी को अपना शिष्य बनाया जो महाशम्भु नाम से जगत में विख्यात हैं।

अब इस आर्ष प्रमाण को अधिक समीचीन माना जाए या आपकी बकवास को ? इसलिए आपके द्वारा दिये गए सभी तथ्य वस्तुतः निराधार तर्कहीन और अविवेकपूर्ण हैं अस्तु रामानन्द सम्प्रदाय श्री जानकी प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय ही है न कि रामानुज सम्प्रदाय का अंग!

प्रश्न २७

अवध, रामघाटनिवासी श्रीविश्वेश्वरदासजी ने अपने 'श्रीवैष्णवधर्मनिर्णय' में इस तरह स्मरण किया है -

श्रीरङ्गमङ्गलमहोत्सववर्धनाय वेदान्तपान्थपरमार्थसमर्थनाय।
कैंकर्यलक्षणविलक्षणमोक्षभाग् वै रामानुजो विजयते यतिराजराजः॥

उत्तर - अरे प्रोफेसर साहब ! बार बार एक ही चीज देने से आपकी वह चीज सत्य नहीं हो जाएगी। आप बार बार अनेक प्राकृत लोगों द्वारा बनाई गए श्लोक दे रहे हैं आप किसी आर्ष ग्रन्थ में से प्रमाण लेकर आइए कि सभी रामोपासक नारायणोपासना की परम्परा से निकले हैं। या फिर कोई प्रामाणिक साक्ष्य प्रस्तुत करिए।

ऐसे ही स्वामी अग्रदेव जी ने स्वामी हरिदास जी की वन्दना लिखी है तो अब रामानन्द सम्प्रदाय हरिदास सम्प्रदाय का अंग हो गया ?

नाभा दास जी ने अनेकों भक्तों की वन्दना भक्तमाल में लिखी हैं तो अब रामानन्द सम्प्रदाय सभी संप्रदायों का अंग हो गया ?

यदि इसी तर्क से किसी को किसी का अंग बताना है तब तो सभी के सभी अंग हो जाएंगे ! इसलिए इन तर्कहीन आक्षेपों में कोई समीचीनता नहीं।
आपने हमको किन्हीं महात्मा का श्लोक दिखाया अब हम आपको आर्ष ग्रन्थ का प्रमाण देते हैं यथा प्रमाण -

भूषुण्डी रामायण उत्तरखण्ड अध्याय १३ श्लोक ४-५
श्री राम उवाच

देहेच्च भुजयोर्युग्मं मामकैर्धनुवीरुधैः ।
कुर्याच्च सर्वगात्रेषु संस्कारं पुण्ड्रकाभिधम् ॥
पवित्रं धारयेन्नाम रामदासादिरूपभाक् ।
तदुच्चारणमात्रेण पूतो भवति मानवः ॥

अर्थ : श्री राम जी ने कहा :- मेरे धनुष और बाण के चिन्हों से दोनों भुजाओं पर तप्त चिन्ह अंकित कराने चाहिये सभी अंगों पर पुण्ड्र का संस्कार करना चाहिये । राम-दास जैसे पवित्र नाम धारण करना चाहिये । उनके उच्चारण मात्र से मनुष्य पवित्र हो जाता है ।

इस प्रमाण में स्पष्ट रूप से भगवान श्री राम ही रामानन्द सम्प्रदाय के पंच संस्कार में से एक धनुर्बाण संस्कार की चर्चा कर रहे हैं । रामोपासक धनुर्बाण से ही दीक्षित होता है ।

पीपा जी के कारण से एक शंख चक्र की भी परम्परा अवश्य है लेकिन वह केवल श्री कृष्णोपासकों के लिए है रामोपसकों के लिए नही ।

तो जब स्वयं श्री राम जी ने ही हमारी परम्परा का सिद्धान्त वर्णित कर दिया है तब आपके दिए हुए प्रमाण इस प्रमाण के आगे रद्दी के कचरे के समान प्रतीत होते हैं । "रामो द्विर्नाभिभाषते" श्री राम दो बार नही कहते हैं एक ही बार कहते हैं इसलिए यह उनका वाक्य परम प्रमाण है जो हमारे सम्प्रदाय का रामानुज सम्प्रदाय से महान भेद प्रकट करता है ।

रामानुज में कौन ऐसा हुआ है जिसने आज तक धनुष और बाण अपने भुजा मूल में अंकित किया हो ?

इसलिए आपका यह प्रलाप भी खण्डित होता है ।

प्रश्न २८

अवध, रामघाटनिवासी श्रीविश्वेश्वरदासजी ने अपने 'श्रीवैष्णवधर्मनिर्णय' में इस तरह स्मरण किया है -

**श्रीरङ्गमङ्गलमहोत्सववर्धनाय वेदान्तपान्थपरमार्थसमर्थनाय।**
**कैङ्कर्य लक्षणविलक्षणमोक्षभाग् वै रामानुजो विजयते यतिराजराजः॥**

**उत्तर - प्रोफेसर साहब ! लगता है आपको बार बार एक ही गलती दोहराने की आदत पड़ चुकी है आप बार बार एक ही निरर्थक कार्य कर रहे हैं किसी प्राकृत भ्रमयुक्त व्यक्ति की उक्ति आर्ष दिव्य ग्रन्थों के प्रमाण कहां टिकेगी ?**

**हम साधकों के हर्ष के लिए एक और आर्ष प्रमाण देते हैं -**
**अगस्त्य संहिता अष्टम अध्याय श्लोक १ से -**

अगस्त्य उवाच -

ब्रह्माददौ वशिष्ठाय स्वसुताय मनुं ततः ।

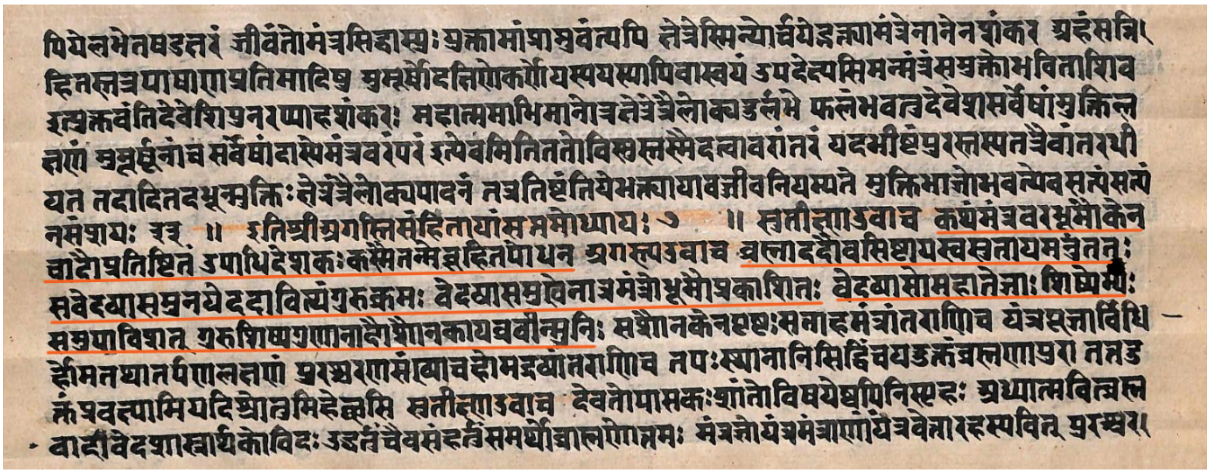
स वेदव्यासमुनये ददावित्थं गुरुक्रमः ॥

वेदव्यासमुखेनात्र मन्त्रो भूमौ प्रकाशितः ।

वेदव्यासो महातेजः शिष्येभ्यः समुपाविशत् ॥

ब्रह्मा जी से यह राम मन्त्र श्री वशिष्ठ जी को प्राप्त हुआ और उनसे यह मन्त्र आगे पराशर जी द्वारा महर्षि वेदव्यास जी तक पहुंचा। वेदव्यास जी के मुख से ही इस मन्त्र का भूमि पर प्रकाश हुआ और उनके माध्यम से ही यह मन्त्र उनके अनेकों शिष्यों को प्राप्त हुआ।

यह श्लोक अगस्त्य संहिता की पुरानी पाण्डुलिपि में भी प्राप्त होता है। यह पाण्डुलिपि रघुनाथ मन्दिर जम्मू के पुस्तकालय में रखी हुई है इसके पृष्ठ १८ में - (जो चिन्हित किया है वो देखिये) -


पियेलभेतषड्दलं जीवंतोमंत्रसिद्धाश्च कामोक्षाश्च वंत्यपि तेत्रैस्मिन्योर्वयेद्वत्या मंत्रेणानेन शंकर ग्रहंसन्नि
हितलत्रयाषाणप्रतिमादिषु मुमूर्षोर्दक्षिणेकर्णेयस्ययस्यापिवास्वयं उपदेक्ष्यसिमन्मंत्रंसमुक्तोभविताशिव
इत्युक्तवंतिदेवेशिपुनरप्यादशंकरः महात्मनाभिमानेत्रतेत्रैलोक्यदुर्लभे फलेभवतदेवेशसर्वेषांमुक्तिल
क्षणं मुमूर्षूणांच सर्वेषांदास्येमंत्रवरंपरं इत्येवमिति ततोविष्णुस्तस्मैदत्त्वावरांतरं यदभीष्टंपुरस्तस्पतत्रैवांतरधी
यत तदादितदभून्मुक्तिः तेत्रैत्रैलोक्यपावनं तत्रतिष्ठंतियेभक्त्यायावज्जीवनियम्यते मुक्तिभाजोभवन्त्येव सत्यंसत्यं
नसंशयः २२ ॥ इतिश्रीअगस्तिसंहितायांसप्तमोध्यायः ७ ॥ सुतीक्ष्णउवाच कथंमंत्रवरभूमौकेन
वादौप्रतिष्ठितं उपाधिदेशकः कस्मैतन्मेब्रूहितपोधन अगस्त्यउवाच ब्रह्मादद्दौवसिष्ठायस्वसुतायमंत्रंततः
सवेदव्यासमुनयेददावित्ययंगुरुक्रमः वेदव्यासमुखेनात्रमंत्रोभूमौप्रकाशितः वेदव्यासोमहातेजाः शिष्येभ्यः
सउपाविशत् गुरुशिष्यगणानादौशौनकायब्रवीन्मुनिः सशौनकेनपृष्टःसमाहमंत्रांतराणिच यंत्रसंज्ञाविधि
र्हीमतध्यानपीठलक्षणं पुरश्चरणसंख्याचहोमद्रव्यांतराणिच तपःस्थानानिसिद्धिंचयदुक्तंब्रह्मणापुरा ततउ
क्तं प्रवक्ष्यामियदिश्रोतुमिहेच्छसि सुतीक्ष्णउवाच देवतोपासकःशांतोविषयेष्वपिनिस्पृहः अध्यात्मवित्ब्रह्म
वादीवेदशास्त्रार्थकोविदः उद्धर्तुंचैवसंहर्तुंसमर्थोब्राह्मणोत्तमः मंत्रज्ञोयंत्रमंत्राणांयंत्रवेत्तारहस्यवित् पुरश्चर

प्रश्न २९

वेङ्कटद्वारका में रामझरोखा स्थान के महान्त श्रीसियारामदासजी ने द्वारकामाहात्म्य में लिखा है-

"सालग्रामनिवासिनो विजयते रामानुजोऽयं मुनिः।"

उत्तर - लगता है प्रोफेसर साहब आप मानेंगे नहीं ! आप तो बार बार गलती दोहराने के आदि हैं इसलिए हम आपको अब आर्ष प्रमाण ही प्रस्तुत कर रहे हैं ताकि इन प्राकृत दोषपूर्ण वचनों की भ्रामकता को लोग समझ सकें।

वशिष्ठ संहिता में भी राम मंत्र की गुरु परम्परा स्पष्ट रूप से लिखी है -

पराशर जी के जिज्ञासा करने पर वशिष्ठ जी ने राम मंत्र की गुरु परम्परा बताई। वशिष्ठ जी ने बताया कि राम जी ने ब्रह्मा जी को प्रकट किया लेकिन ब्रह्मा जी की भगवान राम जी में गुरु भक्ति के अभाव के कारण वह सृष्टि करने में असमर्थ रहे। फिर जब श्री जानकी जी ने उन्हें इस दुख में देखा तब उन्होंने श्री राम जी से प्रार्थना की कि आप मुझे मंत्र प्रदान करें ताकि ब्रह्मा जी को आपका परम मंत्र मिल सके।

तब आगे क्या हुआ इसे वशिष्ठ जी से सुनिए -

वशिष्ठ उवाच

ततो रामस्य खेदं हि समुद्वीक्ष्य च मैथीली ।
गृहीत्वा विधिवद् रामान्मन्त्रराजं षडक्षरम् ॥
नित्यमुक्तो हनूमांस्तं ददौ चतुर्मुखाय हि ।
जगत्कर्त्तस्ततश्चाहमप्राप्नवंश्च तारकम् ॥
मत्तः शक्तिकुमारस्त्वं विधिना लब्धवाँश्चतम् ।
प्रोक्ता पराशरैषा ते राममन्त्रपरम्परा ॥

श्री राम जी से यह रामतारक षडक्षर मंत्र श्री मैथिली जी को विधिवत् प्राप्त हुआ । उन्होंने इस मंत्र को नित्यमुक्त श्री हनुमान जी को दिया । उनसे यह मंत्र चतुर्मुख ब्रह्मा को मिला और इस रामतारक मंत्र को ही मैने(वशिष्ठ ने) जगत्कर्ता श्री ब्रह्मा जी से प्राप्त किया । और इसी मंत्र को मैने शक्तिकुमार पाराशर जी को दिया । इस प्रकार यह दिव्य मंत्र परम्परा धरती पर आई

**इतनी सुस्पष्ट परम्परा होने पर भी इन तर्कहीन प्रमाणों को कैसे प्रमाण रूप में ग्रहण किया जा सकता है ?**

**प्रश्न ३०**

**कानपुर स्थान के पं. श्रीरामप्रसाददासजी ने रामानुजीय गुरुपरम्परा लिखी है। डाकोर, खाकचौक स्थान के पं. श्रीविहारीदासजी ने 'श्रीवैष्णवसिद्धान्तसार' में लिखा है-**

वन्दे रामानुजाचार्य श्रीभाष्यकृज्जगद्गुरुम् । येन प्रतिवादिनः सर्वे शिष्यतान्तु प्रपेदिरे ॥

उत्तर - इसमें कानपुर स्थान के पण्डित जी ने कौनसी गुरु परम्परा बताई ये आपने बताया नहीं इसलिए उसका हम खण्डन कैसे करें !

रही बात विहारीदास जी की तो उन्होंने जो लिखा है उससे यह तो सिद्ध नहीं ही हो रहा है कि रामानुज से रामानन्द सम्प्रदाय निकला है ।

लेकिन इसके विपरीत हमारे पास ठोस प्रमाण हैं उन्हें हम प्रस्तुत करते हैं -

जगद्गुरु अनन्तानन्दाचार्य जी (आचार्य भगवान के प्रधान शिष्य) ने अपने "सिद्धान्त दीपक" ग्रन्थ में क्या लिखा है उसे पढ़ें -

श्लोक ३ में लिखा है -

मारुतिं वीरवज्राङ्गं भक्तरक्षणदीक्षितम् । हनूमन्तं सदा वन्दे राममन्त्रप्रवर्त्तकम् ॥

मैं वीर और वज्र के समान शरीर वाले सदैव भक्तों की रक्षा का व्रत धारण करने वाले और रामतारक षडक्षर मंत्रराज का प्रवर्तन करने वाले पवनकुमार श्री हनुमान जी को नमस्कार करता हूं ।

अस्तु जब स्वयं श्री रामानन्द भगवान के प्रधान शिष्य का ही यह वचन है तब इसके विपरीत रामानुज रामानन्द अभेद की बात कैसे सिद्ध हो सकती है ?

प्रश्न ३१

सीका, कोयलस्थान के पं. श्रीमाधोदासजी ने 'पाखण्डदलन' में दोनों आचार्यो की वन्दना की है-

वन्दे श्रीद्रविडाचार्यं श्रीभाष्यकारं तत्परम् ।
वन्दे श्रीरामानन्दार्यमस्मदाचार्यसद्गुरुम् ॥

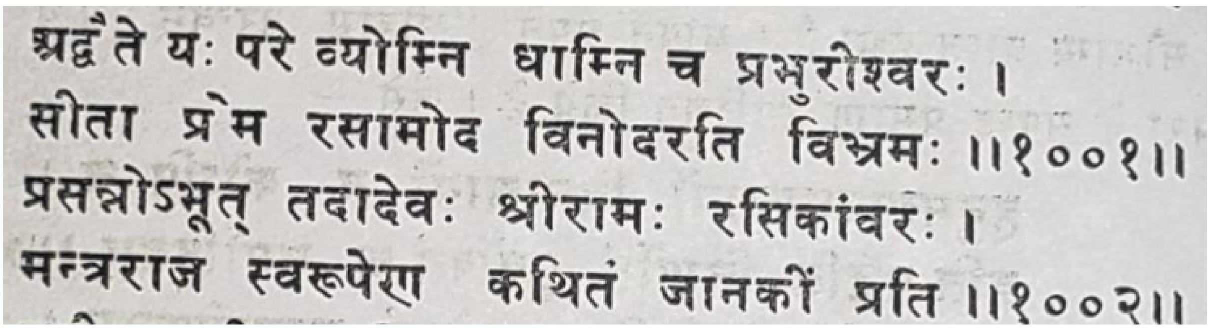
उत्तर - इस आक्षेप में भी आपने बस स्वामी रामानुज की स्तुति को देखकर इससे रामानुज रामानन्द अभेद का निर्धारण कर दिया ! लेकिन ऐसा पक्ष कभी भी समीचीन नही हो सकता !

हम आपको एक और प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं उसका सभी लोग ध्यान से श्रवण करें -

सदाशिव संहितान्तर्गते महामाया-महाविष्णु सम्वादे -

अद्वैते यः परे व्योम्नि धाम्नि च प्रभुरीश्वरः ।
सीता प्रेम रसामोद विनोदरति विभ्रमः ॥
प्रसन्नोऽभूत् तदादेवः श्रीरामः रसिकांवरः ।
मन्त्रराज स्वरूपेण कथितं जानकी प्रति ॥

श्री शिव संहिता में श्री महामाया श्री महाविष्णु भगवान् से कहती है कि परम व्योम दिव्य धाम साकेत में जिसके समान कोई नहीं है उस अद्वितीय परमधाम में ईश्वरों के भी परमेश्वर प्रभु श्रीराम श्री सीताजी के परमपावन प्रेमरस में आमोद-प्रमोद-विमोद में छके हुए अपनी प्राणप्रिया जू पर परम प्रसन्न होकर रसिक राज शिरोमणि श्रीरामजी ने यह मन्त्रराज अपनी प्राणप्रिया श्री जानकी जी को दिया ।


अद्वैते यः परे व्योम्नि धाम्नि च प्रभुरीश्वरः ।
सीता प्रेम रसामोद विनोदरति विभ्रमः ।।१००१।।
प्रसन्नोऽभूत् तदादेवः श्रीरामः रसिकांवरः ।
मन्त्रराज स्वरूपेण कथितं जानकीं प्रति ।।१००२।।

प्रश्न ३२

एवमेव शेषाचल, तिरुपति श्रीहाथीरामजीमठस्थ श्रीरघुवरदासजी, अवध के बड़ी कुहिया के महन्त श्रीप्रेमदास जी के शिष्य श्रीमधुसूदनदासजी, मिथिला, नवाही स्थान के परमहंस श्रीरामशरणदासजी, प्रयाग के श्रीकृष्णानन्द बाघम्बरीजी, हमीरपुर के महान्तश्री लक्ष्मीदासजी प्रभृति ने अपना सम्बन्ध श्रीरामानुजाचार्य जी से स्थापित किया है। श्रीलक्ष्मीदासजी ने यह श्लोक लिखा है -

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वोपद्रवनाशनम्। वन्दे रामानुजार्यस्य नित्यं पादाम्बुजद्वयम्॥

उत्तर - इस श्लोक में भी कही पर रामानुज रामानन्द की एकता स्थापित नही की गई है बस रामानुजाचार्य स्वामी जी की वन्दना है। हमको लगता है प्रोफेसर साहब ! स्वामी रामानुज जी को प्रणाम करना हमें बहुत भारी पड़ रहा है लेकिन कोई बात नही हम स्वामी रामानुज को प्रणाम करते हैं और रामानुज स्वामी को प्रणाम करते ही रहेंगे।

इससे आपको जो समझना हो समझिए लेकिन जानकी प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय रामानुज सम्प्रदाय से सर्वथा भिन्न ही था और भिन्न ही रहेगा।

हम आपको एक और ठोस प्रमाण प्रस्तुत करते हैं -

१८वी शताब्दी में विद्यमान श्री रसिक अली जी ने अपने ग्रन्थ "सिद्धान्त मुक्तावली" में पंच संस्कार में "धनुष और बाण" लेने की ही बात लिखी है यथा प्रमाण :-

श्री राम भक्त लक्षण

तिलक मधुर माला युगल, भुज अंकित धनु बान।
रामसिया युत नाम निज, रामभक्त तेहि जान॥

अर्थात तिलक, युगल माला और भुजाओं पर धनुष और बाण की छाप, श्री सीताराम युक्त दासान्त नाम, ऐसे जनों को श्री रामभक्त जानना चाहिए।

**श्री राम भक्त लक्षण**

तिलक मधुर माला युगल, भुज अंकित धनु बान।
रामसिया युत नाम निज, रामभक्त तेहि जान ॥५॥

क्या आपकी रामानुजीय परम्परा में भी धनुष और बाण लेने का व्यवहार है क्या ? जब नही है तो आपके सभी आक्षेप निराधार हैं।

प्रश्न ३३
दक्षिण, हैदराबाद सदरमठ के श्रीमहान्त श्रीगोपालदासजी के यहाँ से श्रीअवध के वैद्य श्रीरणछोरदास जी ने एक निवेदनपत्र निकाला था जिसमें हैदराबाद के श्रीमहन्तों ने लिखा है-

श्रीवैष्णवों में मठाधीशजगद्गुरु का अधिकार तो हमारे मूलगादीस्थ श्रीतोताद्रि श्रीस्वामीजी श्रीश्रीश्री अनन्तश्रीस्वामीजी को ही है जो कि भारतखण्ड में प्रसिद्ध हैं।

उत्तर - यहां पर जिन अनन्तश्रीस्वामीजी की चर्चा हो रही है ये वही स्वामी जी हैं जिनकी चर्चा हम उज्जैन कुंभ शास्त्रार्थ प्रकरण में कर चुके हैं। ये वही हैं जिन्होंने कनक भवन में दंडवत प्रणाम करने से मना कर दिया था और श्री राम मंत्र को क्षुद्र बताकर कंठी का विरोध करके रामानंदियों की कंठी तुड़वाई थी।

जो इन्हें अपना आचार्य मान रहे हैं उनकी बात प्रमाण कोटि में कैसे आ सकती है ? एक तरफ रामानुज सम्प्रदाय के आचार्य लिख रहे हैं -

स्वामी रंगाचार्य जी "व्यामोहविद्रावण" पृष्ठ २०१ पंक्ति १३ में लिखा है -

रामकृष्णादिमन्त्रैः किमपराद्धमिति चेत् । तेषामधिकारिविशेषापेक्षितयावदर्था प्रतिपादकत्वमेव तदनुपजीव्यत्व प्रयोजकोऽपराधः ॥

अर्थात् श्रीरामकृष्णादि के मन्त्र अधिकारियों के अपेक्षित सम्पूर्ण फलों को नहीं देते इसी अपराध से हमलोग (रामानुजीय लोग) रामकृष्ण मन्त्रों का उपदेश नहीं करते।

एक तरफ आप कह रहे हैं कि राम तारक मंत्र जपने वाली यह रामानन्दी परम्परा रामानुज सम्प्रदाय से निकली है और दूसरी तरफ आपके पूर्वाचार्य लिख रहे हैं कि राम कृष्ण मंत्र अपराधी हैं और इसलिए हम रामानुजी लोग उन्हें उपदेश नहीं करते।

अब आपकी बात मानें या आपके आचार्य की ?

आपके आचार्य के वचन स्पष्ट रूप से रामानुज तथा रामानन्द सम्प्रदाय के महान भेद को प्रकट करते हैं।

प्रश्न ३४
जोधपुर जेतारण के श्रीहरिशरणदेवजी (निम्बार्क) ने 'दिव्यतत्त्वकौमुदी' में लिखा है -
'श्रीरामानुज से श्रीरामानन्दीयशाखा एक होती हुई भी दोनों में आचार-विचार के क्रम भिन्न हो गये।'

उत्तर - निंबार्क सम्प्रदाय के महानुभाव स्पष्ट लिख रहे हैं कि दोनों सम्प्रदाय में आचार विचार का महान भेद है। तब उन्होंने जो एक लिखा वह किस आशय से लिखा। रामानन्द सम्प्रदाय का आचार क्या है। सदैव तुलसी धारण करते हैं रामानुजीय सदैव धारण नही करते। तब दोनों सम्प्रदाय एक कैसे हो सकते हैं? हमारे यहां विरक्त से ही गुरु मंत्र लिया जाता है वहां गृहस्थ से भी ले सकते हैं क्या यह भेद का द्योतक नहीं है?

निंबार्क सम्प्रदाय में राम मंत्र परम्परा के रहस्य का ज्ञान कहां से आया ? रामानुज सम्प्रदाय द्वारा दिए गए ज्ञान से ? या रामानन्दीय परम्परा द्वारा दिए गए ज्ञान से ?

यदि वह ज्ञान अभेदवादी भगीरथों से मिला है तब तो उनका भी यह वक्तव्य भ्रामक है और कथमपि स्वीकार्य नही है।

अरे आप रामानन्द सम्प्रदाय को रामानुज सम्प्रदाय का अंग बताना छोड़िए हमारे आर्ष ग्रन्थों के प्रमाण के आधार पर तो आपके जो इष्ट नारायण हैं उनको भी राम मंत्र ही मिला था। यथा प्रमाण सदा शिव संहितायाम् -

महाशम्भुः महामन्त्रं बह्मविष्णुशिवादिकान्।
कथयामास देवेशो मूलमन्त्रं षडक्षरम्॥

महाशम्भु हनुमान जी ने ब्रह्मा विष्णु और महेश तीनों को मूल मंत्र अर्थात रामतारक षडक्षर महामंत्र दिया।

राम परत्वम पृष्ठ २५८ से उद्धृत -


महाशम्भुः महामन्त्रं बह्मविष्णुशिवादिकान् ।
कथयामास देवेशो मूलमन्त्रं षडक्षरम् ।।१००५।।

तो जब आपके इष्ट ही राम मन्त्र से दीक्षित हैं तब आप रामानुज से रामानन्द सम्प्रदाय के निकलने की बात जो कह रहे हैं वह कितनी भ्रामक है। हम आपसे नही कदाचित आप ही सीतारामीय श्री वैष्णव गुरु परम्परा से निकले हैं इसलिए बात को आगे मत बढ़ाइए अथवा समस्त रामानुज सम्प्रदाय ही रामानन्द सम्प्रदाय का अंग सिद्ध हो जाएगा।

प्रश्न ३५

ग्वालियर, माधोगन के श्रीमधुसूदन गोस्वामी जी ने 'सम्प्रदायतत्त्वमीमांसा' में लिखा है -

'श्रीरामानुजसंप्रदाय के धर्मप्रचारक प्रधान श्रीरामानन्दजी हुए।' उन्होंने ही 'श्रीवैष्णवधर्मसन्दर्भ' में लिखा है -

'श्रीरामानुजीय धर्म के संरक्षक यदि श्रीरामानन्दजी न होते तो उत्तर भारत में उक्त धर्म का लोप ही हो जाता।'

उत्तर - उक्त वचन कितने असंगति पूर्ण हैं इसका अवलोकन इसी से किया जा सकता है कि स्वामी रामानन्द जी ने कही भी नारायण मंत्र की दीक्षा लेने का विधान नही किया । इसके विपरीत स्वामी रामानुजाचार्य जी ने नारायण को ही पर तत्व निरूपित किया है श्री भाष्य में । स्वामी रामानन्द जी ने नारायण को सर्वत्र श्री राम का अवतार घोषित किया है और उनकी परम्परा में आगे के भी आचार्यो ने श्री राम को ही पर तत्व माना है इसलिए रामानुज सम्प्रदाय के धर्म के प्रचारक रामानन्द स्वामी जी नही थे । वे तो श्री सीतारामीय वैष्णव धर्म के प्रवर्तक थे ।

हम आपको एक और आर्ष प्रमाण सीता प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय का दे रहे हैं । यह वाक्य स्वयं श्री रामवल्लभा श्री जानकी जी के हैं यथा प्रमाण -

अथर्व श्रुति मैथिलीमहोपनिषद के चतुर्थोपनिषत् का प्रमाण -

> इममेव मनुं पूर्वं साकेतपति र्मामिवोचत्। अहं हनुमते मम प्रियाय प्रियतराय । सर्वेद वेदिने ब्रह्मणे । स वशिष्ठाय। स पराशराय। स व्यासाय । स शुकाय । इत्येषोपनिषत् इत्येषा ब्रह्मविद्या ।

यही षडक्षर राममन्त्र साकेत के स्वामी सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी ने मुझे कहा। अर्थात् सविधि उपदेश दिया। मैंने मेरे प्रियातिप्रिय सेवक श्रीहनुमानजी को कहा उपदेश दिया। श्रीहनुमानजी ने वेद के ज्ञाता श्रीब्रह्माजी को कहा उपदेश दिया । ब्रह्माजी ने वशिष्ठजी को कहा उपदेश दिया। वशिष्ठजी ने व्यासजी को उपदेश दिया। व्यासजी ने शुकदेवजी कहा उपदेश दिया । यही उपनिषत् है, यही ब्रह्मविद्या है ।

जब स्वयं जानकी जी ही अपनी परम्परा का प्रमाण प्रस्तुत कर रही हैं तब पामर जीवों के ज्ञान पर हम भरोसा करें या ब्रह्म-स्वरूपिणी श्री जानकी जी के वाक्य पर ? इसलिए आपके आक्षेप का खण्डन होता है

प्रश्न ३६

मारवाड़, खेड़ापा सहायपुरा स्थान के रामसनेहियों ने भी अपने मूलपुरुषों का स्मरण किया है-

अगरजीम्हारा गुरुकहाया। रामचरणस्वामी जी गाया॥
गलता से रेवासा आया। गलता तोताधरी की माया॥
यहाँ पर तोताद्रिगादी की झलक है।

उत्तर - प्रोफेसर साहब ! इसी को पाखण्ड की सीमा कहते हैं ! जब आप सम्प्रदाय को एक नही कर सके तो अग्रपीठ को ही रामानुजी सिद्ध करने लग गए आप ?

जब रामानुज सम्प्रदाय ही रामानन्द सम्प्रदाय से भिन्न है तब तो अग्र जी अपनी स्थापित पीठ का नाम तोताद्री शाखा क्यों रखने लगे ?

श्री अग्रदेव जी ने राम मंत्र गुरु परम्परा लिखी है उसमें श्री सीताराम हनुमान ब्रह्मा वशिष्ठ पाराशर व्यास शुक बोधायन प्रभृति आचार्यो से ही अपनी परम्परा स्वीकार कर रहे हैं तब उक्त वचनों को प्रमाण कैसे स्वीकार किया जा सकता है ?

हम आपको एक और आर्ष प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं यथा प्रमाण

वाल्मीकि संहितायाम् द्वितीयाध्याये श्लोक ३१ से ३५ तक -

वाल्मीकि रुवाच-

इदं तु परमं तत्त्वं देवाना मप्यगोचरम्। पृष्टं युष्माभि रनघं कथ्यते श्रृणुतर्षयः ॥ ३१ ॥
भगवान् रामचन्द्रो वै परं ब्रह्म श्रुतिश्रुतः। दयालुः शरणं नित्यं दासानां दीनचेतसाम् ॥ ३२ ॥
इमां सृष्टिं समुत्पाद्य जीवानां हितकाम्यया। आद्यां शक्तिं महादेवीं श्रीसीतां जनकात्मजाम् ॥३३॥
तारकं मन्त्रराजं तु श्रावयामास ईश्वरः। जानकी तु जगन्माता हनूमन्तं गुणाकरम् ॥ ३४ ॥
श्रावयामास नूनं स ब्रह्माणं सुधियां वरम्। तस्माल्लेभे वसिष्ठर्षिः क्रमादस्मादवातरत् ॥
भूमौ हि राममन्त्रोऽयं योगिनां सुखदः शिवः ॥ ३५ ॥ एवं क्रमं समादाय मन्त्रराजपरम्परा।
भूमौ प्रचलिता नित्या सर्वलोकसुखप्रदा ॥ ३६ ॥

परात्पर परब्रह्म भगवान श्रीरामचन्द्र नित्य रूप से अपने दासों के लिए और दीन हृदयवालों के लिए दयालु और शरणागतवत्सल हैं ऐसा वेदप्रसिद्ध है। उन्हीं परम कारुणिक दयासागर भगवान श्रीरामचन्द्र ने इस सृष्टि की रचना कर लोगों की हितकामना से आदिशक्ति महादेवी भगवती जनकपुत्री श्रीसीता जी को यह षडक्षर तारक मन्त्रराज श्रवण कराया। आगे जगन्माता श्रीजानकी जी ने गुणों के सागर श्रीहनुमान जी को यह मन्त्र सुनाया। श्रीहनुमान जी ने सुधीश्रेष्ठ श्रीब्रह्माजी को सुनाया। श्रीब्रह्माजी से यह मन्त्र महर्षि वशिष्ठ को प्राप्त हुआ। और इस क्रम में यह राम मन्त्र भूमि पर अवतीर्ण हुआ। भूमि पर यह मन्त्र योगियों को परम सुख देने वाला और सबका कल्याण करने वाला है। सभी लोकों को सुखप्रद यह राममन्त्रराज की क्रमयुक्त परम्परा भूमि पर नित्य रूप से प्रचलित है।

तब जब श्री रामानन्द सम्प्रदाय की गुरु परम्परा स्वयं शतकोटि रामायण कर्ता वाल्मीकि महर्षि ने बताई है तब रामानन्द सम्प्रदाय की गुरु परम्परा को रामानुज का अंग कहना ये आपकी कितनी बड़ी धूर्तता है प्रोफ़ेसर साहब!

आपके इस कुतर्क का भी खण्डन हो गया।

प्रश्न ३७

वदनपुर, प्रयाग के पं. श्रीराघवेन्द्रदासजी ने 'श्रीभागवतचरितचन्द्रिका' के आदि में लिखा है -

श्रीशठकोपादिक सकल नित्यमुक्त सुखखानि।
श्रीरामानुज यतिपतिहि वन्दौं निज गति जानि॥
वन्दों श्रीरामानन्दपद रामरूप जग माँहि।
भवसागर के तरण को सुलभ जगत सब काँहि॥

उत्तर - इस चौपाई की भी कोई प्रामाणिकता नहीं ही हो सकती क्योंकि इसके विपरीत ही वाल्मीकि संहिता के प्रमाण अनुसार रामानन्द सम्प्रदाय श्री सीताराम जी से आरम्भ हुआ है यथा प्रमाण

वाल्मीकि संहितायाम् तृतीयाध्याये श्लोक १०७ और १०९

श्री सीता रामतः प्राप सा ददौ वायुसूनवे। ब्रह्मणे स ददावित्थं मन्त्रराज परम्परा ॥ १०७ ॥
प्रातरुत्थाय ये नित्यं सततं श्रद्धयान्विताः। पठन्तीमां परप्रीत्या मन्त्रराजपरम्पराम् ॥ तेऽपि
ब्रह्मपदं यान्ति मुक्त्वा देहामिमं खलु ॥ १०८ ॥

श्रीरामजी से प्राप्त करके यह मन्त्र श्रीजानकी मैय्या ने श्रीहनुमान जी को दिया और उन्होंने फिर ब्रह्मा जी को दिया यही श्रीराममन्त्रराज की परम्परा का क्रम है और हर श्रीसीतारामोपासक रामानन्दीय श्रीवैष्णव को प्रतिदिन प्रातः काल इसका श्रद्धा और परमप्रीति भाव से इसका अनुसन्धान करना चाहिए।

इसलिए हम सभी रामानन्दीय श्रीवैष्णव साधकों को यह सन्देश और आचार्यो संतों और महंतों से आग्रह करना चाहते हैं कि आप सभी जन अपने अपने स्थानों पर अपनी गुरुपरम्परा का अंकन कराएं और नित्य अपनी गुरुपरम्परा का प्रीतिपूर्वक उच्चारण करें। यही इस दास का परमनिवेदन आप सभी रामानन्दीय श्रीवैष्णवों से है। आचार्यप्रापत्ति ही सबसे बड़ा धर्म है क्योंकि आचार्य ही वो राजमार्ग प्रदर्शक हैं जो सीधे साकेतपुरी की प्राप्ति कराते हैं और उनकी कृपा के प्रसाद से ही एक जीव वास्तविकता में अपने मूलस्वरूप में स्थित होता है।

प्रश्न ३८
श्रीवृन्दावन, वंशीवट जगन्नाथजी के स्थान के भक्तमाली पं. श्रीभागवतदासजी ने 'श्रीभागवतचरितामृतसार' में लिखा है -

श्रीरामानुज अनन्त-अवतारा। श्रीसंप्रदाय विदित संसारा।
चक्रअंश निंबारक पावन। सनकादिक संप्रदाय सोहावन॥
पद्म गदा ते माधवाचारज। विधिगुरुसुगमभक्तिगुणआरज॥
विष्णुस्वामी शंखहि कर अंशा। शंभुगुरु जग करत प्रशंसा॥
सिन्धुसुतापतिवचन को कीन्ह शेष प्रतिपाल।
श्रीपद्धति थापी अटल सुनहु सो चरित रसाल॥
तेहि पद्धति में जन्म ले श्रीनाभा मतिधीर।
कह्यो भागवतचरित को सुनत मिटै भवपीर॥
चरित भागवत रतन अमोला। श्रीहरिकृपा पात्र धरि तोला॥
सबसे अधिक गुरुअ जियजानी। दीह रमा कहें अतिसुखखानी॥
श्री विष्वक्सेनहि कहि दीन्हा। विष्वक्सेन से शठरिपु लीन्हा॥
नाथमुनी तिनते पुनि पावा। तिन पुण्डरीकाक्ष प्रति गावा॥
राममिश्र चरित्र शुभ कीन्हों। राममन्त्रजीवन कहें दीन्हों॥
श्रीमत यामुन तिनते पावा। महापूर्ण तिनते पुनि गावा॥
श्रीरामानुज को तिन्ह दीन्हा। कूरेशादि तिनते पुनि लीन्हा॥
रामानुज-पद्धति की लीला। सुनहु सुजन पावन अतिशीला॥
श्रीआचारज भये हरि-ध्यानी। तिनके लालाचारज ज्ञानी॥
वरवर से अगणित भये दासा। तिनका, सुयश विमल जग खासा॥

तिहि मग भये आचारज जेते । आप तरे तारे नर केते ॥ वरवर ते मुनि देवाचारज । तिनते हरियाचार्य प्रचारज ॥ श्रीराघवानन्द व्रत लीन्हें । छमापात्र अवलम्बन कीन्हें ॥
तिनके रामानन्द उदारा । मनहु राम फिर नर-तनु धारा ॥
तिनके द्वादश शिष्य भे द्वादश भानु समान ॥ तिन मह जेष्ठ अनन्तानन्दा ।
गुरु पय-उदधि-हर्षप्रद चन्दा ॥
चरित रामप्रिय सबन के आगे करब बखान ॥
तिनके कृष्णदास शुभलीला । अति विचित्र जिनकी गतिलीला ॥
कृष्णदास के शिष्य द्वे कील अगर अस नाम ।
धर्मधुरन्धर सन्तनृप रत हरिपद निष्काम ॥
यह विधि शिष्य-प्रशिष्य चलि आवा । अग्रदास नाभा प्रतिगावा ॥

इसी परम्परा को रीवाँ के नरेश महाराज श्रीरघुराजसिंह जी ने अपनी 'भक्तमाला' में लिखी है ।

उत्तर - सचमुच प्रोफेसर साहब ! आपने तो रामानुज सम्प्रदाय पर कलंक लगाने का अटल संकल्प ले लिया है ऐसा ही उक्त आक्षेप से प्रतीत होता है । पहले आपने उन चौपाइयों को अच्छे से देख समझ तो लिया होता क्योंकि इन चौपाइयों के अनुसार तो राम मंत्र की परम्परा ही रामानुज सम्प्रदाय में चली है अर्थात आपका रामानुज सम्प्रदाय सीताप्रवर्तित श्री सम्प्रदाय का ही अंग घोषित हो गया यथा प्रमाण -

ऊपर जो चौपाइयां गिनाई गई हैं उसमें इस चौपाई को देखिए -

"राम मिश्र चरित्र शुभ कीन्हों । राममंत्र जीवन कंह दीन्हो ॥"

अर्थात पुंडरीकाक्ष जी ने राम मिश्र को राम मंत्र ही दिया । उन्होंने भी आगे यामुनाचार्य जी को राम मंत्र दिया । उन्होंने आगे राम मंत्र बढ़ाया और स्वामी रामानुज को भी राम मंत्र ही मिला । क्या यह तथ्य रामानुज सम्प्रदाय को ही स्वीकार्य है क्या ?

इन चौपाइयों में एक और महान दोष है यदि आप ध्यान से चौपाइयों को पढ़ें तो इनके अनुसार वरवर मुनि की चौथी पीढ़ी में स्वामी रामानन्द महाप्रभु को बताया गया है ।

जगद्गुरू स्वामी रामानंदाचार्य जी महाराज का प्राकट्य अगस्त्य संहिता के अनुसार १२९९ ईस्वी ही माना गया है और रामानुज सम्प्रदाय के ही विद्वानों के अनुसार वरवर मुनि का जन्म १३७० ईस्वी में हुआ है ।

अब आप ही बताइए प्रोफेसर साहब ! कि कोई व्यक्ति 70 साल आगे जन्म लेकर चार पीढी पीछे का आचार्य हो सकता है ? ये नई विद्या तो लगता है रामानुज सम्प्रदाय ने ही इजाद की है।

इसलिए ये सभी चौपाइयां अत्यन्त अप्रामाणिक हैं।

प्रश्न ३९
श्रीवृन्दावन, विहारवन के निवासी पं. श्री माधोदासजी ने अपने 'हरिभक्तसहस्त्रनाम' में लिखा है -

श्रीरामानुज शेष निम्ब आदित्य सुदर्शन
मध्वाचारज ब्रह्म विष्णुस्वामी संकर्षन ॥
विष्वक्सेन मुनिवर्य सुपुनि शठकोप प्रनीता।
बोपदेव श्रीनाथ पुण्डरीकाक्ष परम रसमीता ॥
मङ्गलमुनि और राममिश्र रसराशि पराङ्कुश।
श्रीयामुनमुनि श्रीरामानुज भरे परम यश ॥
लालाचारज एक सन्त की ध्वज फहराई।
हरिजन आये धाम देखि के अचरज आई ॥
देवाचारज की महिमा अति और जय हरियानन्द हरे।
राघवानन्द प्रेम की राशी जगजश रामानन्द भरे ॥

उत्तर - आपने जो चौपाइयां प्रस्तुत की हैं उन चौपाइयों में महान दोष है।

पहली त्रुटि तो यह है कि मध्वाचार्य जी ब्रह्मा के अवतार नही हैं बल्कि वायु - हनुमान - भीम के अवतार हैं।

दूसरा यह कोई क्रमबद्ध गुरु परम्परा है ही नही क्योंकि फिर से वरवर मुनि के पांचवी पीढ़ी में ही रामानन्द स्वामी जी को रखा गया जो कि तर्कहीन और इतिहास के दृष्टि से अत्यन्त अप्रामाणिक है। अस्तु इस आक्षेप का भी खण्डन हुआ।

प्रश्न ४०
सं. १८८० में लिखी हुई श्रीबालानन्दजी के स्थान की यह गुरुपरम्परा प्राप्त होती है

प्रथमहि श्रीपतिवृन्दि के मध्य यामुनाचार्य।
मम श्रीगुरुपर्यन्त लों वन्दो सब आचार्य ॥

श्रीनारायण प्रथम गुरु तिनके शिष्य श्रीदेवि।
तिनके विष्वक्सेनजी शिष्य भये हरिसेवि॥
तिनके श्रीशठकोपमुनि जग-उद्धारण हेतु।
प्रगट भये अवतार ले भवसागर के सेतु॥
तिनके शिष्य श्रीनाथमुनि प्रगट भये जग माहि।
राम-मन्त्र उपदेश करि मुक्त किये सब काँहि॥
भये पुण्डरीकाक्ष पुनि तासु भजन करि सीव।
राममिश्र तिनके भये मुक्त किये बहुजीव॥
यामुनमुनि तिनके भये जीवन को गति दीन।
पूर्णमुनि तिनके भये शिष्य भजनरसलीन॥
श्रीरामानुज तिनके भये सो शेष-अवतार।
राममन्त्र उपदेश करि किये सकल भवपार॥
पुनि तिनके गोविन्द भे भट्टारक पुनि जानि।
तिनके श्रीवेदान्तिजी सकल गुणन को खानि॥
तिनके श्रीकलिजित भये तिनके कृष्णाचार्य।
रहस्य अष्टदश प्रकट किये कलि मह पुनि लोकार्य॥
तिनके शिष्य शैलेशजी वरवरमुनि पुनि शेष।
अष्टगादी स्थापना करि दीन्हों उपदेश॥
आचारी तिनके भये पुरुषोत्तम यह नाम।
जो कोऊ शरणागत भये तिनको दियो हरिधाम॥
देवाचारज शिष्य भये तिनके भजन प्रमान।
शिष्यन को हरिभक्ति दै मुक्ति दिये करि दान॥
हरियाचारज शिष्य भये तिनके सब जग जान।
भये राघवानन्द पुनि तिनके भजन सुजान॥
श्रीरघुवर अवतार ले प्रगटे रामानन्द।
कलिमहँ जे मतिमन्द अति मुक्त किये नरवृन्द॥
तिनके शिष्य द्वादश भये द्वादश भानुसमान।
निज विज्ञान प्रकाशकरि नाश कियो अज्ञान॥
प्रथम अनन्तानन्द मे सुखानन्द सुखधाम।
भये सुरसुरानन्द पुनि भावानन्द सुनाम॥
अरु नरहरियानन्द पुनि सैन भक्त रैदासु।
पीपा भये कबीर पुनि धना नाम है आसु॥
रानी भई पद्मावती भइ सुरसरि एक वाम।
स्वामी रामानन्द के शिष्यन के ये नाम॥
करि विचार तिन बाधियों रामभजन दृढ़ सेतु।
भवसागर दुस्तर अगम जीव उद्धारन हेतु॥

स्वामी रामानन्द के शिष्य, सुरसुरानन्द।
हरिविमुखन को भक्ति दे काट दिये भवफन्द ॥
तिनके केवलानन्द में करुणासागररूप में
जो जन शरणागत भये सो न परे भव कूप
तिनके विमलानन्द मे विमल किये सब जीव।
पतितन को पावन किये घरे भक्ति की सीव ॥
शिष्य विमलानन्द के रामसुधीरानन्द।
तिनको धीरज घरनिसम हृदय बसहिं रघुचन्द ॥
रामसुधीरानन्द के भावानन्द बखान।
विमुखन को हरिभक्ति वे दूर किये अज्ञान ॥
तिनके अनभयानन्द प्रभु अभय किये बहु जीव।
पाखण्डिन को प्रलय करि धरी धर्म को सीव ॥
अद्भुत अनभयानन्द की कहि न जाय करतूत।
दशनामी वामीन को प्रगट रह्यो न हि पूत ॥
अतिउदार अनभ्यान की कोप गई तरवार।
गिरी पुरी वन भारती भगे बघम्बर डार ॥
अनभय कियो अनभ्यान ने रामभक्ति परकाश।
शुद्ध किये दुर्बुद्धिजन दुष्ट धर्म किये नाश ॥
शस्त्र शास्त्र अरु सिद्धता सूरवीरता अङ्ग।
सैन साजि चतुरङ्गिनी जीते बहुविधि जंग ॥
अजहूँ अनभयानन्द की बाँधि भेख मर्याद।
सम्प्रदाय सुखकरन को मिट गयो सकल विषाद ॥
स्वामी अनभयानन्द के शिष्य विचित्रानन्द।
तिनके विमलानन्द पुनि वल्लभ आनन्दकन्द ॥
तिनके ब्रह्मानन्दजी सगुण ब्रह्म करि ध्यान।
व्रजानन्द तिनके भये सकल गुणन की खान ॥
व्रजानन्द व्रजवेश में गिरी गोवर्धन आय।
वैष्णव आराधन किये सर्वजनन सुखदाय ॥
व्रजानन्द को व्रत सुन्यो भूपभक्त जयसिंह।
बहुत दिनन बहु जतन करि कीन्हों मिलन प्रसङ्ग ॥
जिनको आगम जानि के सन्मुख आयो लैन।
करि प्रणाम सनमान बतु ले आये संग सैन ॥
व्रजानन्द महाराज के शिष्य श्रीबालानन्द।
बालक राम उपासना सन्त जनन सुखकन्द ॥
स्वामी श्रीबालानन्द को बल यश तेज प्रताप।
दशनामी गोसाई सब डरकर करत मिलाय ॥

सम्प्रदाय चारों जुटी रह्यों लस्कर-संग।
परी छाप जब लस्करी बहुविध जीते जंग॥
द्वारा अखाड़ा बाँधियों स्वामी बालानन्द।
द्रविड़ देश के धर्म को उत्तर प्रगट सुछन्द॥
तिनके शिष्य युवराज पुनि नाम गोविन्दानन्द।
मन विहार तन राजसी किये बहुत आनन्द॥
तिनके गुण गम्भीर अति नाम गभीरानन्द।
तिनके सेवानन्दजी जस तारन में चन्द॥
स्वामी सेवानन्द सम सेवा करी न कोय।
सियारामगुण ग्राम के दियो विषयरस खोय॥
अति उदार रिझवारि पुनि करि विचारि मद मारि।
भजि करारि अधहारि निज सेवानन्द शिरदारि॥
तिनके शिष्य युवराज भै नाम श्रीरामानन्द।
तिनके ज्ञानानन्दजी मेट दियो दुखद्वन्द॥
स्वामी ज्ञानानन्द को सुयश रह्यो जग छाय।
सुखसंपत्ति हरिगुरुकृपा बढ़ो अनुदिन अधिकाय॥
परम्परा वर्णन करी वैष्णव सारङ्गदास।
मो यम हर करि दीजिये हरि-गुरु-चरणनिवास॥
अष्टादश पर अस्सी है हिमऋतु पूसहि मास।
तिथि नौमी गुरुवार दिन वरन्यो वंश प्रकाश॥
वृद्ध गुरुन ते जस सुनो तस हम कियो बखान।
न्यूनाधिक हठ करिहि शठ करिहैं नरक पयान॥

इति श्रीबालानन्दस्वामिस्थानाधिपतिश्रीरामानन्दस्वामिशिष्येण
श्रीवैष्णवसारङ्गदासेन विरचितप्राचीनश्रीगुरुपरम्परा समाप्ता शुभं भूयात् भवताम्।

उत्तर - प्रोफेसर साहब ! आपने इन चौपाइयों का भी गहनता से शोध नहीं किया और बिना इसके शोधन किए ही इसे छाप दिया। इन चौपाइयों में क्या लिखा है हम आपको बताते हैं और आपसे ही कुछ प्रश्न करना चाहते हैं यथा -

"तिनके शिष्य श्रीनाथमुनि प्रगट भये जग माहि।
राम-मन्त्र उपदेश करि मुक्त किये सब काँहि॥"

यहां पर इस चौपाई में नाथमुनि ने राम मंत्र की ही परम्परा चलाई ऐसा लिखा है। अर्थात लक्ष्मी नारायण से राम मंत्र की परम्परा चली है नारायण अष्टाक्षर मंत्र की नही।

आपसे प्रश्न - क्या आप मानते हैं कि आपकी परम्परा में लक्ष्मी जी से लेकर स्वामी रामानुज तक राम मंत्र ही आया ? इसका उत्तर आप क्या देंगे ? प्रोफेसर साहब ! हम जानते हैं आप कभी इसे सत्य नही मान सकते तो आप जिसको खुद ही सत्य नही मान सकते हैं उसे आप प्रस्तुत कैसे कर रहे हैं ?

"श्री रामानुज तिनके भए सो शेष अवतार।
राम मंत्र उपदेश करि किये सकल भवपार ॥"

इस चौपाई में श्री रामानुज जी ने गोपुर पर चढ़कर राम मंत्र का उपदेश किया था ऐसा लिखा है।

लेकिन भक्तमाल में लिखा है कि उन्होंने नारायण मंत्र ही गोपुर पर चढ़कर लोगों को सुनाया था इसलिए यह चौपाइयां अत्यन्त संदेहास्पद प्रतीत होती हैं।

इन चौपाइयों के अनुसार श्री रामानन्द स्वामी जी को वरवर मुनि स्वामी जी के पांचवी पीढ़ी में बताया गया है जबकि वरवर मुनि रामानन्द स्वामी जी से ७० वर्ष बाद जन्म लिए हैं।

जब वरवर मुनि रामानन्द स्वामी के ७० साल बाद जन्म लिए हैं तो रामानन्द स्वामी जी के पांच पीढी पीछे के आचार्य कैसे हो सकते हैं ?

इन सब त्रुटियों के आधार पर यह निश्चित कहा जा सकता है कि यह चौपाइयां अप्रामाणिक और भ्रम आदि दोषों से युक्त होने के कारण निराधार हैं।

इसलिए आपका यह आक्षेप भी खण्डित हुआ।

प्रश्न ४१
अयोध्या, श्रीवृहत्स्थानाधिपति को उस समय गलता की परम्परा मोहर हस्ताक्षर के सहित प्राप्त हुई थी, जो इस प्रकार है -

१. श्रीमन्नारायणजी

२. श्रीलक्ष्मीजी

३. श्रीविष्वक्सेन जी

४. श्रीशठकोपजी

५. श्रीनाथमुनिजी

६. श्रीपुण्डरीकाक्षजी

७. श्रीराममिश्रजी

८. श्रीयामुनाचार्यजी

९. श्रीमहापूर्णाचार्यजी

१०. श्रीरामानुजस्वामीजी

११. श्रीगोविन्दाचार्यजी

१२. श्रीभट्टार्कस्वामीजी

१३. श्रीवेदान्तिस्वामीजी

१४. श्रीकलिजित्स्वामीजी

१५. श्रीकृष्णाचार्यजी

१६. श्रीलोकाचार्यजी

१७. श्रीशैलेशजी

१८. श्रीवरवरमुनिजी

१९. श्रीदेवाचार्यजी

२०. श्रीहरियाचार्यजी

२१. श्रीराघवाचार्यजी

२२. श्रीरामानन्दस्वामीजी

२३. श्रीअनन्तानन्दजी

२४. श्रीकृष्णदासजी

२५. श्रीकीलजी

२६. श्रीछोटेकृष्णदासजी

२७. श्रीविष्णुदासजी

२८. श्रीनारायणदासजी

२९. श्रीहरिदेवाचार्यजी

३०. श्रीरामप्रपन्नाचार्यजी

३१. श्रीहरियाचार्यजी

३२. श्रीश्रियाचार्यजी

३३. श्रीजानकीदासजी

३४. श्रीरामाचार्यजी

३५. श्रीसीतारामाचार्यजी

३६. श्रीहरिप्रसादाचार्यजी

३७. श्रीहरिवल्लभाचार्यजी

३८. श्रीहरिशरणाचार्यजी

उत्तर - यह जो परम्परा दी गई है उसमें कितनी महान त्रुटि है उसका अवलोकन करें -

इस गुरु परम्परा के अनुसार वरवर मुनि जी के चौथी पीढ़ी में ही रामानन्द स्वामी जी हुए ऐसा कहा है जबकि ऊपर के प्रश्न में ही बता चुके हैं कि वरवर मुनि अगस्त्य संहिता के प्रमाण अनुसार श्री रामानन्द स्वामी जी १२९९ ईस्वी में हुए और रामानुज सम्प्रदाय के अनुसार वरवर मुनि स्वामी जी १३७० ईस्वी में हुए तब वरवर मुनि रामानन्द स्वामी जी के चार पीढी पीछे कैसे हो सकते हैं ?

इस महान त्रुटि के कारण यह परम्परा ही अप्रामाणिक सिद्ध होती है।

प्रश्न ४२
यह परम्परा सं. १७१५ की लिखी मिलती है जिसे श्रीकीलजी के चतुर्थ गादीपति श्रीहरिदेवाचार्यजी ने लिखी है। श्रीबालानन्दस्वामीजी की परम्परा से यह परम्परा मिलती है।

श्रीअग्रस्वामीजी का स्थान रेवासा है जहाँ की गुरुपरम्परा भी इस तरह प्राप्त होती है -

१. श्रीमते लक्ष्मीनाथाय नमः

२. श्रीलक्ष्मीदेव्यै नमः

३. श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः

४. श्रीमते शठकोपाय नमः

५.. श्रीमते नाथमुनये नमः

६. श्रीमते पुण्डरीकाक्षाय नमः

७. श्रीमते राममिश्राय नमः

८. श्रीमते यामुनमुनये नमः

९. श्रीमते पूर्णाचार्याय नमः

१०. श्रीमते रामानुजाय नमः

११. श्रीमते गोविन्दाचार्याय नमः

१२. श्रीमते भट्टार्काय नमः

१३. श्रीमते वेदान्तिस्वामिने नमः

१४. श्रीमते कलिजित्स्वामिने नमः

१५. श्रीमते कृष्णाचार्याय नमः

१६. श्रीमते लोकाचार्याय नमः

१७. श्रीमते शैलेशाय नमः

१८. श्रीमते रम्यजामातृमुनये नमः

१९. श्रीमते देवाचार्य नमः

२०. श्रीमते हरियाचार्याय नमः

२१. श्रीमते राघवाचार्याय नमः

२२. श्रीमते रामानन्दाय नमः

२३. श्रीमते अनन्तानन्दाय नमः

२४. श्रीमते कृष्णदासाय नमः

२५. श्रीमते अग्रदासाय नमः

२६. श्रीमते विनोदीस्वामिने नमः

२७. श्रीमते ध्यानदासाय नमः

२८. श्रीमते रामचरणदासाय नमः

२९. श्रीमते बालकृष्णदासाय नमः

३०. श्रीमते सुखरामदासाय नमः

३१. श्रीमते रामसेवकदासाय नमः

३२. श्रीमते केशवदासाय नमः

३३. श्रीमते जानकीदासाय नमः

३४. श्रीमते सहजरामदासाय नमः

३५. श्रीमते भगीरथदासाय नमः

३६. श्रीमते रामानुजदासाय नमः

३७. श्रीमते चतुर्भुजरामानुजदासाय नमः

३८. श्रीमते जगन्नाथाचार्याय नमः

उत्तर - ये परम्परा भी इसलिए फर्जी है क्योंकि इसमें भी "रम्यजामातृ मुनि" अर्थात वरवर मुनि के चौथी पीढ़ी में ही रामानन्द स्वामी जी को रखा गया है।

और जैसा कि हम पहले बता चुके कि वरवर मुनि स्वामी रामानन्द जी के ७० वर्ष बाद जन्में हैं इसलिए वह पीछे चौथी पीढ़ी में नही हो सकते इसलिए यह गुरु परम्परा अत्यन्त अप्रामाणिक सिद्ध होती है।

इसके पश्चात हम आपको रामानन्द सम्प्रदाय के प्राचीन ग्रंथों में क्या सिद्धान्त निरूपित है वह बताएँगे उससे भी यह सिद्ध होगा कि रामानन्द सम्प्रदाय का रामानुज सम्प्रदाय से महान भेद है -

इसके पश्चात हम आपको रामानन्द सम्प्रदाय के प्राचीन ग्रंथों में क्या सिद्धान्त निरूपित है वह बताएँगे उससे भी यह सिद्ध होगा कि रामानन्द सम्प्रदाय का रामानुज सम्प्रदाय से महान भेद है -

श्री स्वामी हरिदास जी महाराज जी ने रामस्तवराज भाष्य में श्री सीताराम जी को ही गुरु स्वीकार किया है यथा प्रमाण -

रामं स्वादिगुरुं नत्वा परंब्रह्मसनातनम् ।
द्विभुजं जानकीनाथं सच्चिदानन्दविग्रहम् ॥ १ ॥

सीताञ्चादिगुरुं नत्वा चिद्रूपां रामवल्लभाम् ।
श्रीरामसान्निध्यवशात्सृष्टिस्थित्यंतकारिणीम् ॥ ६ ॥

उन्होंने इन श्लोकों में स्पष्ट रूप से सीताराम जी को अपने गुरु के रूप में स्वीकार किया है।

श्री अग्रदेव जी ने अपनी कृति ध्यान मंजरी में सर्वप्रथम अपने आराध्य श्री रघुवीर भगवान को ही प्रणाम किया है यथा प्रणाम -

मूल-सुमिरौं श्रीरघुवीर धीर रघुवंशविभूषण ।
शरण गहे सुखराशि हरत अघसागर दूषण ॥१॥

यहाँ ध्यान देना चाहिए कि उन्होंने "शरण गहे" इस पद से अपनी शरणागति श्री राम में ही मानी है अन्य किसी स्वरूप में नहीं इससे यह सिद्ध होता है कि वे श्री राम को ही परतत्त्व मानने वाली परम्परा - श्री जानकी प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय के आचार्य थे।

वाल्मीकि रामायण पर शिरोमणि टीका लिखने वाले पण्डित शिव सहाय जी रामानन्द सम्प्रदाय से ही थे। यह टीका सर्वप्रथम १८५५ में प्रकाशित हुई। उस टीका में "सीताराम समारम्भां" ऐसा लिखकर वे रामानन्द सम्प्रदाय की परम्परा को श्री सीताराम जी से ही मानते हैं यथा प्रमाण -

सीतारामसमारम्भां शुकाचार्यादिमध्यगाम् ।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरंपराम् ॥ ९ ॥

अग्रदेवाचार्य जी के वंश में एक महान आचार्य हुए - श्री रामप्रसादाचार्य जिन्होंने अयोध्या में दशरथ महल की संस्थापना की। उनका काल १७००-१८०० के बीच माना

जाता है। उन्होंने एक ग्रन्थ अपने शिष्यों के लिए बनाया था। उस ग्रन्थ का नाम है धर्मशिक्षा पत्री - उसमें उन्होंने स्पष्ट रूप से अपने आराध्य, सम्प्रदाय में विशेष मान्य ग्रंथों की चर्चा की है यथा प्रमाण -

मंत्रराजः परोजाप्यः सीताराम षडक्षरः ।
यस्मात्परतरोनास्ति मन्त्रोवेदैः सुनिश्चितम्॥५६॥

मंत्रराजही सबसे उत्तम जपने योग्य मंत्र है। अथवा श्रीसीतारामजी के षड्क्षर मंत्र को जपे, क्योंकि षड्क्षर मंत्र से परतर वेदों में कोई भी मंत्र नहीं है ॥५६॥

यहाँ स्पष्ट रूप से राम तारक मंत्रराज को ही उन्होंने जाप्य स्वीकार किया है नारायण अष्टाक्षर मन्त्र को नही इससे ही सम्प्रदाय का भेद स्पष्ट है।

आगे उन्होंने कहा है

श्रीरामस्यद्विधारूपो द्विभुजश्चतुर्भुजः ॥
चतुर्भुजश्च वैकुंठे साकेते द्विभुजःस्वयम्॥११९॥

श्रीरामजी के द्विभुज तथा चतुर्भुज दो प्रकार के रूप है। चतुर्भुज रूप से वैकुंठ में और द्विभुज रूपसे साकेत में स्वयं स्थित हैं ॥११९॥

परात्परश्चद्विभुजो जानकीवल्लभो विभुः ॥
श्रीसाकेतात्परे धाम्नि सीताया सह संस्थितः॥१२०

परंच परात्पर रूप द्विभुज ही हैं, वे श्रीजानकीवल्लभ सर्वत्र व्याप्त साकेत संज्ञिक परधाम में श्रीजनकात्मजाजी के सहित सदा स्थित हैं ॥१२०॥

श्रीराम जी के दो स्वरूप हैं - द्विभुज और चतुर्भुज लेकिन परात्पर स्वरूप द्विभुज ही है यहां पर द्विभुज स्वरूप को परात्पर बोलकर उन्होंने स्पष्ट इस सम्प्रदाय के आराध्य श्री राम के स्वरूप का निर्धारण कर दिया है।

आगे वे अपने सम्प्रदाय में मान्य ग्रंथों का नाम गिना रहे हैं -

श्रीमद्रामायणं चार्षं तथा वाल्मीकिसंहिताम् ।
अध्यात्ममानसं चैव महारामायणं तथा ॥९५॥

वाल्मीकीय श्रीमद्रामायण वा वाल्मीक संहिता
अध्यात्म रामायण मानस रामायण वा महा रामायण ॥ ९५

हनुमत्संहिता चैव तथा श्रीशिवसंहिता ।
अगस्त्य संहिता चैव ग्रन्थाइष्टा विशेषतः ॥९६॥

श्रीहनुमत्संहिता तथा शिव संहिता, अगस्त संहिता
ये ग्रन्थ विशेष रूप से इष्ट हैं ॥९६॥

यहाँ उन्होंने स्पष्ट रूप से शिव संहिता और हनुमत संहिता आदि ग्रंथों को परम प्रामाणिक मानते हुए उन्हें अपने सम्प्रदाय के विशेष ग्रन्थ के रूप में कहा है।

यही नही इस ग्रन्थ में वे अपना सम्बन्ध सीधे श्री गोस्वामी जी से प्रस्तुत करते हुए अपने शिष्यों को श्री गोस्वामी जी के ग्रंथों को पढ़ने की आज्ञा करते हैं -

श्रीमत् तुलसीदासस्य सर्वं काव्यं मनोहरम् ।
रहस्यं रामचरितं ममेष्टानि विशेषतः ॥ ९८ ॥

और गोस्वामी श्री तुलसीदासजी के सब काव्य जो
मनोहर हैं । तथा अन्य भी श्रीराम चरित जो रहस्य
हों वे हमें विशेषतर प्रिय हैं ॥९८॥

यहाँ उन्होंने श्री गोस्वामी जी के ग्रंथों को विशेषतर प्रिय कहा है अस्तु इस ३०० वर्ष पुराने प्रमाण के अनुसार यह सिद्ध है कि श्री रामप्रसादाचार्य जी श्री जानकी प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय से ही अपना सम्बन्ध मानते हैं।

अस्तु इन सब श्रुति स्मृति इतिहास आदि आर्ष प्रमाणों और साम्प्रदायिक रहस्यों आदि के प्रमाण तथा तार्किक अनुशीलन आदि से यही सिद्ध होता है कि रामानन्दीय श्री वैष्णव परम्परा श्री जानकी प्रवर्तित श्री सम्प्रदाय है न कि रामानुजीय परम्परा की शाखा।

अभी कोई रामानुजीय व्यक्ति मनीष कुमार ने कहा कि "प्रपन्नामृत" ग्रन्थ कुरेश स्वामी के पुत्र का नहीं है। इस तथ्य को प्रमाणित करते हुए हम एक प्रमाण रख रहे हैं यथा -

राजस्थान ओरिएण्टल रिसर्च संस्थान ने "कैटलॉग ऑफ़ संस्कृत एंड प्राकृत मैनुस्क्रिप्ट्स" अलवर संग्रह भाग २१ -  इस पुस्तक के अंतर्गत ऍम०एस०एस नंबर ४६०७ में इस प्रपन्नामृत पाण्डुलिपि का नाम लेकर इसके लेखक के नाम में "पराशर भट्टाचार्य" यही नाम लिखा है यथा प्रमाण -

| | | | |
|---|---|---|---|
| 4607 | 1391 | Prapannāmṛta (Rāmā-nuja-carita | Pārāśara Bhaṭṭā-cārya |



इससे यह सिद्ध हुआ कि प्रपन्नामृत के लेखक कुरेश स्वामी के पुत्र ही हैं

अभी अभी ज्ञात हुआ कि स्वामी विद्याभास्कर जी ने कहा कि दक्षिण भारत की पाण्डुलिपि में राधा जी को शूर्पणखा नही कहा गया और जिस प्रति में ऐसा प्राप्त हो रहा है वह रामानुज-रामानन्द सम्प्रदाय से इतर दुराग्रही लोगों द्वारा बनाया गया है - इस पर मैं आपसे प्रश्न करना चाहता हूँ स्वामी जी -

१. इस प्रति को छपने वाले वेंकटेश्वर प्रेस हैं जिनका सम्बन्ध रामानुज सम्प्रदाय से ही है

२. इसके प्रकाशक नृसिंहाचार्य द्वारा १९०८ में यह ग्रन्थ छपाया गया है जो इसका प्रथम संस्करण है।

यथा प्रमाण - हम प्रपन्नामृत की उस प्राचीन प्रकाशित प्रति का पहला पृष्ठ दिखा रहे हैं -

॥ श्रीः ॥

श्रीमद्दिव्यसूरिपूर्वाचार्यादिदिव्यचरित्रप्रकाशकं

# प्रपन्नामृतम् ।

अज्ञानतमोनिवर्तककृतिरत्नतया श्रीमदान्ध्रपूर्णकुलकलशोद-
धिपूर्णचन्द्रत्व प्रकाशितवता-

श्रीमदनन्ताचार्येण प्रणीतम् ।

तदेतत

श्रीनिवासनृसिंहाचार्येण ( बालाजीस्वामिना ) सम्यक्परिशोधितम् ।

तच्च

खेमराज श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालये मुद्रयित्वा

प्रकाशितम् ।

आश्विन संवत् १९६४, शके १८२९

क्या रामानुज सम्प्रदाय में इससे पुरानी कोई प्रपन्नामृत की पुस्तक छपी है क्या ?

यदि इससे पुरानी कोई प्रकाशित प्रति हो तो उसे सामने रखिये हम उसे स्वीकार करेंगे लेकिन जब तक नही मिलती तब तक प्रलाप करने का क्या प्रयोजन है ?

इससे आपके वक्तव्यों की स्थूलता का परिचय मिलता है जिससे आपके पक्ष का खण्डन भी हो रहा है।

और भूलिए मत आपके ही पूर्वाचार्य तोताद्रि स्वामी अनन्ताचार्य जी ने कनक भवन में दण्डवत करने से इनकार कर दिया था यह सत्य आज से ६० वर्ष पूर्व छापे "श्री सम्प्रदाय मन्थन" , "भगवदाचार्य जी की आत्मकथा", कुछ वर्ष पूर्व छपे "पूर्वाचार्यचरितम" आदि ग्रन्थों में वर्णित है कोई देखना चाहे तो हमारे पास आये उसे हम दिखाएंगे -

इसी के साथ कमलाकांत त्रिपाठी जी के सभी प्रश्नों का खण्डन हुआ और रामानन्द सम्प्रदाय की स्वतन्त्र गुरु परम्परा श्री सीता जी से चली है यह सिद्ध हुआ

श्री सम्प्रदाय की गुरु परम्परा -

1. सर्वेश्वर श्री रामचन्द्र जी
2. श्री रामवल्लभा जानकी जी
3. श्री हनुमंत लाल जी महाराज
4. श्री ब्रह्मा जी महाराज
5. श्री वशिष्ठ जी महाराज
6. श्री पाराशर जी महाराज
7. श्री वेद व्यास जी महाराज
8. श्री शुकाचार्य जी महाराज
9. श्री बौधायन पुरुषोत्तमाचार्य जी महाराज
10. श्री गंगाधराचार्य जी महाराज
11. श्री सदानंदाचार्य जी महाराज
12. श्री रामेश्वरानंदाचार्य जी महाराज
13. श्री द्वारानंदाचार्य जी महाराज
14. श्री देवानंदाचार्य जी महाराज
15. श्री श्यामानंदाचार्य जी महाराज
16. श्री श्रुतानंदाचार्य जी महाराज
17. श्री चिदानंदाचार्य जी महाराज
18. श्री पूर्णानंदाचार्य जी महाराज
19. श्री श्रियानंदाचार्य जी महाराज
20. श्री हर्यानंदाचार्य जी महाराज
21. श्री राघवानंदाचार्य जी महाराज
22. श्री रामावतार श्री जगद्गुरु श्री स्वामी रामानंदाचार्य जी महाराज

श्री सीतारामचन्द्रार्पणमस्तु !